डॉ० श्यामा प्रसाद मुखर्जी

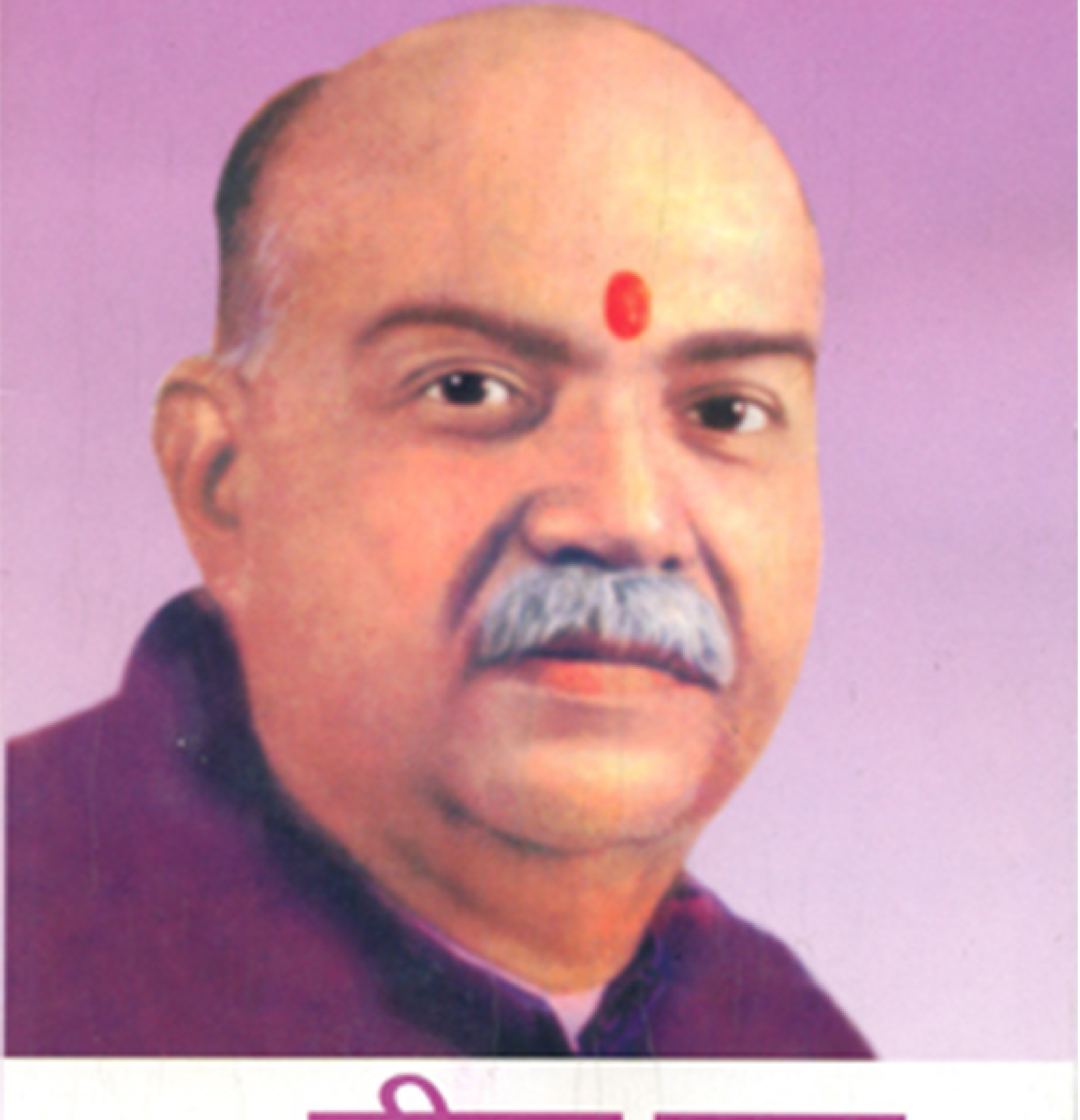

जीवन यात्रा

शिव कुमार गोयल

दो शब्द

मेरे पिताश्री भक्त श्री रामशरणदास जी धार्मिक विषयों के सुपरिचित लेखक थे। 'कल्याण' आदि पत्र-पत्रिकाओं में जहाँ उनके धर्म और भक्ति सम्बंधी लेखों का प्रकाशन होता था, वहीं महान स्वाधीनता सेनानी भाई परमानंद जी द्वारा सम्पादित 'हिन्दू', अरुणोदय (इटावा) तथा प्रो. रामसिंह जी द्वारा सम्पादित 'केसरी' आदि पत्रों में उनके हिन्दुत्व सम्बंधी लेखों का निरन्तर प्रकाशन हुआ करता था। इन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों को पढ़कर किशोरावस्था में ही मेरे हृदय में राष्ट्रवादी संस्कार जाग्रत होने लगे थे। स्वातन्त्र्यवीर सावरकर जी, भाई परमानंद जी, डॉ. बालकृष्ण शिवराम मुँजे, डॉ. हेडगेवार जी, डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी जैसे राष्ट्रवाद के पुरोधाओं के विषय में जानकारी प्राप्त कर मैं इन सबके प्रति श्रद्धावान बन गया था।

२३ जून १९५३ को डॉ. मुखर्जी के श्रीनगर में नजरबंदी के दौरान निधन हो जाने का समाचार मिलते ही मेरे अनन्य मित्र श्री आनन्दप्रकाश सिंहल तथा उनके हिन्दुत्वनिष्ठ युवा साथियों ने संकल्प लिया कि कश्मीर की अखण्डता के लिए बलिदान देनेवाले महान राष्ट्रनायक डॉ. मुखर्जी की पावन स्मृति में पिलखुवा में एक पुस्तकालय-वाचनालय की स्थापना की जायेगी और ३१ अगस्त १९५३ को मुखर्जी पुस्तकालय-वाचनालय की स्थापना कर दी गयी।

मुखर्जी पुस्तकालय के लिए सत्साहित्य प्राप्त करने के लिए मैं आनन्द जी के साथ भारती साहित्य सदन, नयी दिल्ली गया तो वहाँ साहित्य मनीषी आदरणीय वैद्य गुरुदत्त जी के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वैद्यजी डॉ. मुखर्जी के अंतिम समय में श्रीनगर में उनके साथ ही नजरबंद थे। वे यह जानकर बहुत प्रसन्न हुए कि पिलखुवा में 'श्री मुखर्जी पुस्तकालय' की स्थापना हुई है। वैद्यजी को अगस्त १९५७ में मुखर्जी पुस्तकालय की

समाचार-पत्र प्रदर्शनी के उद्घाटन के लिए आमंत्रित किया गया। उन्होंने डॉ. मुखर्जी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर भाषण दिया, जिसे सुनकर सभी प्रभावित हुए।

वैद्यजी के सुयोग्य पुत्र तथा भारती साहित्य सदन के संचालक आदरणीय भाई योगेन्द्र जी ने वीर सावरकर जी के निधन के तुरन्त बाद सन् १९६६ में मुझे प्रेरित कर 'अमर सेनानी सावरकर' पुस्तक लिखवाई तथा प्रकाशित की। उन्हीं की प्रेरणा पर मैंने 'स्वामी विवेकानंद-जीवन और विचार' पुस्तक भी लिखी।

इसी वर्ष एक दिन मुझे योगेन्द्र जी के पुत्र चि. पद्मेश का संदेश मिला कि मैं वैद्य गुरुदत्त जी द्वारा लिखित 'डॉ. मुखर्जी की अंतिम यात्रा' पुस्तक के पूरक के रूप में उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर एक पुस्तक लिखूँ। मैंने डॉ. साहब से संबंधित अनेक पुस्तकों का अध्ययन किया। आदरणीय प्रो. बलराज मधोक लिखित डॉ. मुखर्जी की जीवनी तथा बड़ा बाजार लाइब्रेरी, कोलकाता द्वारा प्रकाशित एवं श्री जुगलकिशोर जैथलिया द्वारा सम्पादित डॉ. मुखर्जी स्मारिका से मुझे बहुत तथ्य प्राप्त हुए। इन दोनों का मैं हृदय से आभारी हूँ।

डॉ. मुखर्जी की जीवनी लिखकर मैंने चि. पद्मेश की आकांक्षा को मूर्त रूप दिया है। आशा है पाठक जम्मू-कश्मीर की अखण्डता के लिए अपना जीवन समर्पित करनेवाले इस महान राष्ट्रपुरुष के जीवन से राष्ट्रहित को सर्वोपरि महत्त्व देने की प्रेरणा लेकर मेरा लेखन सार्थक करेंगे।

-शिवकुमार गोयल

भक्त रामशरणदास भवन

पिलखुवा (गाजियाबाद), उप्र

कुलीन वंश में जन्म

२ जुलाई सन् १९०१ का दिन था। कलकत्ता के भवानीपुर क्षेत्र में एक तिमंजिले मकान के एक कमरे में कलकत्ता हाईकोर्ट के जज श्री आशुतोष मुखर्जी विचारमग्न मुद्रा में बैठे हुए थे। कुछ देर पहले ही उन्होंने अपनी पत्नी योगमायादेवी तथा पुत्र श्यामाप्रसाद मुखर्जी के साथ मिलकर देवी की मूर्ति के सामने बैठकर पूजा-अर्चना व दुर्गा सप्तशती का पाठ किया था। माँ काली के भव्य चित्र के समक्ष दीप जल रहा था।

पिता-पुत्र साथ-साथ बैठे हुए थे कि आशुतोष बाबू के एक वकील मित्र ने कमरे में प्रवेश किया। उसने आते ही कहा-"आशु बाबू, क्या आज का न्यूज पेपर पढ़ा है? लंदन में मदनलाल ढींगरा नाम के युवक ने सर करजन वायली पर गोली चलाकर उसकी हत्या कर डाली।"

आशुतोष बाबू ने तब तक समाचारपत्र नहीं पढ़ा था। उन्होंने मेज पर से समाचारपत्र उठाया। उसके मुख पृष्ठ पर काला बार्डर लगाकर प्रमुखता के साथ एक भारतीय क्रांतिकारी युवक द्वारा लंदन में सरेआम सभा में की गयी इस हत्या की घटना का प्रमुखता से प्रकाशन किया गया था।

न्यायाधीश आशुतोष ने कहा-"अभी चंद दिनों पहले ही तो पुणे में १६ वर्षीय कान्हेरे नामक युवा क्रांतिकारी ने नासिक के डी.एम. जैक्सन की गोली मार कर हत्या की थी। अब लंदन में घटी इस घटना से पूरे ब्रिटेन में हड़कंप मच गया होगा। भारत में भी क्रांतिकारी युवकों के साथ और ज्यादा सख्ती की जाएगी।"

कुछ क्षण चिन्तन की मुद्रा में बैठने के बाद आशुबाबू ने कहा-"वकील साहब! इस प्रकार की घटनाएँ तो एक न एक दिन होनी ही थीं। किसी भी राष्ट्र को शक्ति के बल पर अधिक समय तक पराधीन नहीं रखा जा सकता। अभी देखना क्रांति की यह आग और तेजी से फैलनी है।"

८ वर्षीय श्यामाप्रसाद अपने पिता और उनके मित्र की बातें सुनकर

चौंक पड़ा। जब वकील चले गये तो उसने अपने पिताजी से पूछ लिया–''रेवेल्यूश्नरी कौन होते हैं? वे अंग्रेजों की हत्याएँ क्यों कर रहे हैं।''

पिताजी ने कहा–''तुम इन बातों से दूर रहो। अपनी पढ़ाई में लगे रहो।''

पहली बार श्यामाप्रसाद को पता चला कि विदेशी अंग्रेजों से देश को स्वाधीन कराने के लिए युवक क्रांतिकारी भारत ही नहीं अंग्रेजों के गढ़ लंदन तक में सक्रिय हो उठे हैं।

श्यामाप्रसाद का जन्म ६ जुलाई सन् १९०१ को श्री आशुतोष मुखर्जी तथा योगमायादेवी के पुत्र के रूप में हुआ। उनके पितामह श्री गंगाप्रसाद मुखर्जी की एक सुयोग्य चिकित्सक के रूप में दूर-दूर तक ख्याति थी। वे बंगाल के कुलीन ब्राह्मणों में आदर्श माने जाते थे। पूरा परिवार धर्मनिष्ठ तथा आचार-विचारों का दृढ़ता से पालन करनेवाला था। परिवार में माँ काली की पूजा अर्चना विधि-विधान से की जाती थी।

पिता आशुतोष मुखर्जी बाल्यावस्था से ही असाधारण मेधावी थे। बंगला के साथ-साथ देववाणी संस्कृत भाषा के प्रति उनके हृदय में अनूठी निष्ठा थी। संस्कृत के अध्ययन के बाद उन्होंने अनेक प्राचीन धर्मग्रंथों का अध्ययन किया। इससे उनके हृदय में सनातनधर्म की परम्पराओं तथा मान्यताओं के प्रति श्रद्धा की भावना विकसित हुई।

श्री आशुतोष मुखर्जी की गणित की पढ़ाई में विशेष रुचि थी। वे क्षण भर में ज्यामितिक प्रश्न सुलझा देने की क्षमता रखते थे। उनकी इस अनूठी प्रतिभा को देखकर उन्हें लंदन मैथेमेटिकल सोसायटी की सदस्यता प्रदान की गयी।

२९ मार्च सन् १८६४ को जन्मे आशु बाबू ३५ वर्ष की आयु में सन् १८९९ में बंगाल लेजिस्लेटिव कौंसिल के लिए निर्वाचित हुए। सन् १९०३ में वे दोबारा कलकत्ता कारपोरेशन के प्रतिनिधि के नाते बंगाल लेजिस्लेटिव कौंसिल के लिए निर्वाचित हुए।

शिक्षा के क्षेत्र में उनकी रुचि एवं अनूठी प्रतिभा को देखते हुए उन्हें इंडियन यूनिवर्सिटीज कमीशन का सदस्य मनोनीत किया गया। लार्ड

कर्जन कलकत्ता यूनिवर्सिटी की प्रगति में व्यक्तिगत रुचि लेते थे। वे श्री आशुतोष की असाधारण प्रतिभा से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने उन्हें कलकत्ता विश्वविद्यालय का उपकुलपति मनोनीत कर दिया।

सन् १९०४ में उन्हें कलकत्ता हाईकोर्ट का जज मनोनीत किया गया। कुछ ही समय में निष्पक्षता और न्यायप्रियता के लिए उनकी ख्याति दूर-दूर तक फैल गयी।

न्यायाधीश तथा कुलपति जैसे सर्वोच्च पदों पर आसीन होने के बावजूद श्री आशुतोष मुखर्जी अपने धार्मिक संस्कारों के पालन में अडिग रहे। उनका जीवन अत्यंत सरल तथा सात्विक बना रहा।

वह प्रतिदिन गंगा स्नान करने के बाद दुर्गा सप्तशती का पाठ करते थे। मिलने आनेवाले प्रत्येक व्यक्ति की सहायता व मार्गदर्शन करना अपना पावन कर्त्तव्य समझते थे।

एक बार रविवार के दिन वे किसी मुकदमे की फाइल देखने में इतने व्यस्त हो गये कि गंगा स्नान के लिए जाते-जाते देर हो गयी। गंगा स्नान के बाद जब वे कंधे पर गीली धोती व गमछा डालकर हाथ में जल से भरा लोटा लेकर लौट रहे थे कि रास्ते में एक महिला ने उन्हें कर्मकाण्डी पंडित समझा और उनके पास जा पहुँची। वह हाथ जोड़कर बोली-"महाराज! मेरे पति का श्राद्ध होना है, लेकिन मुझ गरीब विधवा को कोई पंडित नहीं मिल रहा है। क्या मेरे पति बिना श्राद्ध के अतृप्त ही रह जाएँगे?"

आशु बाबू ने उसकी करुणाभरी बात सुनी और बोले-"चलो मैं श्राद्ध कराये देता हूँ।"

वे वृद्धा की झौंपड़ी में पहुँचे और पूरे विधि-विधान से श्राद्ध कर्म संपन्न कराया। जब वृद्धा भोजन करने तथा दक्षिणा ग्रहण करने का आग्रह करने लगी तो वे बोले-"माँ जी, दक्षिणा व भोजन किसी गरीब को दे दीजिएगा। मैं पेशे से श्राद्ध करानेवाला पंडित नहीं हूँ।"

उनकी अदालत का पेशकार वहीं पास ही रहता था। आशु बाबू जैसे ही वृद्धा की खोली से बाहर निकले कि पेशकार की नजर उन पर पड़ी।

कुछ ही देर में उसे पता लग गया कि जज साहब वृद्धा के आग्रह पर उसके पति का श्राद्ध कर्म करवाकर निकले हैं, तो वह एक महान जज साहब की करुणा भावना व सरलता को देखकर हतप्रभ हो उठा।

दूसरे दिन पेशकार ने जब उनके बंगले पर पहुँचकर उनके पुत्र श्यामाप्रसाद मुखर्जी को पहले दिन की घटना सुनाई तो परिवार के सभी लोग हँसते-हँसते लोटपोट हो गये।

एक बार श्री आशुतोष मुखर्जी न्यायालय में चल रहे किसी मामले की जाँच करने मधुपुर गये हुए थे। कार्य पूरा होने के बाद वे कलकत्ता पहुँचने के लिए मधुपुर रेलवे स्टेशन पर पहुँचे। रेल आधा घंटा विलंब से आनेवाली थी। उनके अर्दली ने प्रतीक्षालय में सामान रख दिया। इसी बीच मधुपुर का अंग्रेज एस.डी.एम. वहाँ पहुँचा तथा प्रतीक्षालय में आराम कुर्सी पर पसरकर चुरुट पीने लगा।

श्री मुखर्जी धोती-कुर्ता पहने प्लेटफार्म पर टहल रहे थे। जब वे प्लेटफार्म से प्रतीक्षालय में आये, तब भी अंग्रेज पैर पसारे चुरुट पीता रहा। श्री मुखर्जी का अर्दली उन्हें पानी पीने के लिए गिलास देने लगा तो उसकी वर्दी देखकर वह समझ गया कि ये कोई बड़ी हस्ती हैं। उसने एकांत पाकर अर्दली से पूछा-"आ. के साहब कौन हैं।" जब उसे बताया गया कि ये जस्टिस मुखर्जी हैं, तो तुरन्त उसने चुरुट फेंका और खड़ा होकर उन्हें लंबा सलाम ठोंका।

बाद में उन्होंने कलकत्ता में अपने मित्र से इस घटना की चर्चा करते हुए हँसते हुए क़हा-"ये गोरे अफसर भारतीयों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। इन साहब से मुझे सलाम मेरे अर्दली की वर्दी ने कराया है।"

श्री आशुतोष मुखर्जी ने रामायण, गीता तथा धर्म-शास्त्रों से भारतीयता पर दृढ़ बने रहने के सद्गुण ग्रहण किये थे। माता-पिता के प्रति वे अगाध श्रद्धा भावना रखते थे। प्रतिदिन घर से बाहर जाते समय माता-पिता के चरण स्पर्श करते थे। रात्रि को सोने से पूर्व उनकी सेवा करते थे। उनकी आज्ञा लिये बिना कोई कार्य कदापि नहीं करते थे।

एक बार लार्ड कर्जन ने उनसे एडवर्ड सप्तम के अभिषेक उत्सव में

भाग लेने के लिए इंग्लैंड जाने का आग्रह किया। उन्होंने कहा-"मैं अपनी माता जी से आज्ञा लेने के बाद ही इंग्लैंड जाने की स्वीकृति दे सकता हूँ।''

माता जी नहीं चाहती थीं कि उनका पुत्र उन्हें छोड़कर अपने देश से बाहर जाए। उन्होंने विनम्रता से इंकार कर दिया।

लार्ड कर्जन ने कहा-"अपनी माता जी को कह दो कि देश के वायसराय तथा गवर्नर जनरल का आदेश है कि वे इंग्लैंड जाएं।''

मुखर्जी ने विनम्रता से उत्तर दिया-"मेरे लिए माँ के आदेश व इच्छा से बढ़कर किसी दूसरे का आदेश कोई महत्व नहीं रखता।''

लार्ड कर्जन उनके निर्भीकता भरे शब्द सुनकर हतप्रभ रह गये। कलकत्ता उच्च न्यायालय के जज तथा विश्वविद्यालय के उपकुलपति जैसे पदों पर रहते हुए भी श्री आशुतोष मुखर्जी अंदर ही अंदर उन दिनों देश में चल रही स्वाधीनता की लहर के प्रति पूर्ण सहानुभूति रखते थे। लोकमान्य तिलक तथा अन्य राष्ट्रीय नेताओं द्वारा स्वदेशी अभियान चलाए जाने पर उन्होंने अपने मित्रों से अंग्रेजी की जगह भारतीय भाषाओं को महत्त्व देने के पक्ष में विचार व्यक्त किये थे। वे स्वयं धोती-कुर्ता धारण करने में गर्व का अनुभव करते थे। उन्होंने अपने कमरे में विभिन्न विषयों की हजारों पुस्तकों का संकलन किया हुआ था। लोकमान्य तिलक द्वारा संपादित 'केसरी' तथा राष्ट्रभक्ति की भावना का प्रसार करनेवाली अन्य पत्र-पत्रिकाओं का वे नियमित अध्ययन करते थे। उनके निजी पुस्तकालय में धर्म, संस्कृति तथा राष्ट्रीयता की प्रेरणा देनवाला विपुल साहित्य था। छत्रपति शिवाजी, महाराणा प्रताप, गुरु गोविन्दसिंह तथा अन्य राष्ट्रवीरों के जीवन चरित्रों का उन्होंने गहन अध्ययन किया था। श्रीमद्‌भगवद्‌गीता को वे कर्म व भक्ति की प्रेरणा देनेवाला सर्वोत्कृष्ट धर्म शास्त्र बताया करते थे।

उन दिनों कलकत्ता में यतीन्द्रनाथदास, देशबन्धु चितरंजनदास, रामानन्द चटर्जी आदि जहाँ राष्ट्रीय भावनाएँ पनपाने में लगे हुए थे वहीं कुछ बंगाली युवक क्रांतिकारी गतिविधियों में सक्रिय थे।

आध्यात्मिक विभूति भाई हनुमानप्रसाद पोद्दार उन दिनों कलकत्ता में व्यापार करने के साथ-साथ गीता के प्रचार में संलग्न थे। कलकत्ता की साहित्य संवर्द्धिनी समिति की ओर से भाईजी तथा उनके युवा सहयोगियों ने गीता का प्रकाशन कराया था। गीता के मुख पृष्ठ पर भारत माता का ऐसा चित्र दिया गया था, जिसमें वह हाथ में खडग लिये हुए खड़ी थी। कलकत्ता के प्रशासन ने इस पुस्तक को राजद्रोह को बढ़ावा देनेवाली बताकर जब्त कर लिया था।

श्री पोद्दार जी ने एक बार बताया था कि जब वे गीता के इस संस्करण की एक प्रति भेंट करने श्री आशुतोष मुखर्जी के निवास पर गये, तो उन्होंने इसके प्रकाशन के लिए उन्हें बधाई दी।

श्री आशुतोष मुखर्जी ने यह अनुभव किया था कि अंग्रेज अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से युवा भारतीयों को अपने साम्राज्य का हस्तक मात्र बनाये रखना चाहते हैं। उन्हें लार्ड मैकाले के शब्द याद थे कि अधिकांश अंग्रेजी पढ़े-लिखे भारतीय अपनी संस्कृति व सभ्यता त्याग कर स्वत: अंग्रेजों के पिछलग्गू बन जाएंगे। अत: उन्होंने भारतीयता पर आधारित शिक्षा तथा बंगला, संस्कृत, हिन्दी आदि भारतीय भाषाओं को महत्त्व देनेवाले विद्यालयों की स्थापना की जरूरत को समझा। उन्होंने अपने अनेक धनाढ्य मित्रों को प्रेरणा देकर विद्यालयों की स्थापना कराई, जिससे बच्चे अपनी संस्कृति व परम्पराओं को अक्षुण रखते हुए पठन पाठन कर सकें।

कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति के नाते श्री मुखर्जी ने सन् १९०६ में बंगला भाषा की पढ़ाई शुरू कराई। उनके प्रयास से आगे चलकर भारतीय भाषाओं में एम.ए. की परीक्षा शुरू की गयी।

आशुतोष बाबू न्यायाधीश तथा उपकुलपति जैसे पदों पर रहते हुए भी देश के स्वाधीनता आंदोलन के प्रति सहानुभूति बनाये रहे। अपने राष्ट्र के सांस्कृतिक उत्थान के प्रति वे पग-पग पर जागरुक बने रहे।

माता-पिता से मिले संस्कार

श्यामाप्रसाद अपनी माता तथा पिता को प्रतिदिन नियमित पूजा-पाठ करते देखते तो वे भी धार्मिक संस्कारों को ग्रहण करने लगे। वे पिताजी के साथ बैठकर उनकी बातें सुनते। माँ से धार्मिक एवं ऐतिहासिक कथाएँ सुनते-सुनते उन्हें अपने देश तथा संस्कृति की जानकारी होने लगी।

वे माता-पिता की तरह प्रतिदिन माँ काली की मूर्ति के समक्ष बैठकर दुर्गा सप्तशती का पाठ करते। परिवार में धार्मिक उत्सव व त्यौहार मनाया जाता तो उसमें पूरी रुचि के साथ भाग लेते। गंगा तट पर व मंदिरों में होने वाले सत्संग समारोहों में वे भी भाग लेने जाते।

आशुतोष मुखर्जी चाहते थे कि श्यामाप्रसाद को अच्छी से अच्छी शिक्षा दी जाए। उन दिनों कलकत्ता में अंग्रेजी माध्यम के अनेक पब्लिक स्कूल थे। आशुतोष बाबू यह जानते थे कि इन स्कूलों में लार्ड मैकाले की योजनानुसार भारतीय बच्चों को भारतीयता के संस्कारों से काटकर उन्हें अंग्रेजों के संस्कार देने वाली शिक्षा दी जाती है।

उन्होंने एक दिन मित्रों के साथ विचार-विमर्श कर निर्णय लिया कि बालकों तथा किशोरों को शिक्षा के साथ-साथ भारतीयता के संस्कार देने वाले विद्यालय की स्थापना कराई जानी चाहिए।

उनके अनन्य भक्त विश्वेश्वर मित्र ने योजनानुसार 'मित्र इंस्टीट्यूट' की स्थापना की। भवानीपुर में खोले गये इस शिक्षण संस्थान में बंगला तथा संस्कृत भाषा का भी अध्ययन कराया जाता था।

श्यामाप्रसाद को किसी अंग्रेजी पब्लिक स्कूल में दाखिला दिलाने की बजाए 'मित्र इंस्टीट्यूट' में प्रवेश दिलाया गया। आशुतोष बाबू की प्रेरणा से उनके अनेक मित्रों ने अपने पुत्रों को इस स्कूल में दाखिला दिलाया। वे स्वयं समय-समय पर स्कूल पहुँच कर वहाँ के शिक्षकों से पाठ्यक्रम के विषय में विचार-विमर्श किया करते थे। छात्रों को पाठ्य पुस्तकों के अलावा

नैतिक शिक्षा दी जाए ऐसा उनका आग्रह रहता था। श्रीराम, कृष्ण, शिव, दुर्गा, तुलसीदास, सूरदास आदि के विषय में जानकारी दी जाती थी। उन्हें प्राचीन ऋषि-मुनियों, धर्मशास्त्रों आदि की भी जानकारी दी जाती थी।

श्यामाप्रसाद ने सन् १९१७ में मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की थी।

उन्हें प्रेसीडेन्सी कालेज में दाखिल कराया गया। वह इन्टर की तैयारी करने लगे। शिक्षकों को जब पता लगा कि श्यामाप्रसाद विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री आशुतोष मुखर्जी के पुत्र हैं, तो वे उनमें विशेष रुचि लेने लगे। अधिकांश छात्र सूट-बूट पहनकर आते थे, जबकि श्यामाप्रसाद धोती-कुर्ता पहनकर कालेज पहुँचते थे। बातचीत के दौरान वे अपने साथी छात्रों से कहा करते थे-"हमें अपने देश की संस्कृति, अपनी भाषा तथा अपनी वेशभूषा पर गर्व करना चाहिए। अंग्रेजों का अन्धानुकरण हम क्यों करें?"

कलकत्ता की एक धार्मिक संस्था ने उन दिनों स्वामी विवेकानंद जी द्वारा अमेरिका के विश्व धर्म सम्मेलन में हिन्दू धर्म के महत्त्व पर दिये गये भाषण को पुस्तिका के रूप में प्रकाशित कराया था। श्यामाप्रसाद ने वह भाषण पढ़ा तो बहुत प्रभावित हुए। वे कालेज के धार्मिक वृत्ति के शिक्षक तथा कुछ छात्रों के साथ स्वामी रामकृष्ण परमहंस तथा स्वामी विवेकानंद की तप:स्थली दक्षिणेश्वर गये। वहाँ उन्होंने स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी की आराध्या काली माँ के दर्शन किये तो अभिभूत हो उठे।

वे जन्मजात असाधारण प्रतिभा के धनी थे। सन् १९१९ में उन्होंने इन्टर आर्ट्स की परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्हें विश्वविद्यालय में प्रथम घोषित किया गया।

प्रेसीडेंसी कालेज की वार्षिक मैगजीन प्रकाशित होती थी। उन्हें सन् १९२० की कालेज मैगजीन का सम्पादक मनोनीत किया गया। मैगजीन का संपादन करने के कारण उन्हें अनेक नये विषयों का अध्ययन करना पड़ा। लेखों के संपादन करने का अनुभव हुआ। उन्होंने अंग्रेजी में अनेक लेख लिखे, जिनकी सर्वत्र प्रशंसा की गयी।

श्यामाप्रसाद जी ने उन्हीं दिनों अंग्रेजी साहित्य का अध्ययन किया। विश्वगुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर के काव्य ने उन्हें बहुत प्रभावित किया। बंकिमचन्द्र चटर्जी के उपन्यासों ने भी उन्हें आकर्षित किया।

उन्होंने सन् १९२१ में बी.ए. अंग्रेजी आनर्स के साथ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण ही नहीं किया, अपितु वे कलकत्ता विश्वविद्यालय में प्रथम आये।

श्यामाप्रसाद जी के अंग्रेजी ज्ञान को देखते हुए उनके हितैषी अंग्रेजी प्राध्यापकों ने उनसे एम.ए. अंग्रेजी में करने का सुझाव दिया। श्यामाप्रसाद को पता था कि उनके पिताश्री अंग्रेजी की जगह बंगला तथा एक अन्य भारतीय भाषा को महत्त्व देने के आकांक्षी रहे हैं। उसी के अनुरूप उन्होंने एम.ए. में बंगला भाषा तथा एक अन्य भारतीय भाषा को माध्यम बनाया।

सन् १९२३ में एम.ए. की परीक्षा भी उन्होंने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

२३ वर्षीय श्यामाप्रसाद मुखर्जी की असाधारण प्रतिभा की ख्याति पूरे बंगाल में फैलने लगी थी। अनेक बंगाली कुलीन ब्राह्मण श्री आशुतोष के पास श्यामाप्रसाद के विवाह के प्रस्ताव को लेकर पहुँचे। एक बंगाली ब्राह्मण जज अपनी पुत्री का संबंध श्यामाप्रसाद से करने के इच्छुक थे। किन्तु आशुबाबू ने सुविख्यात कवि बिहारी लाल चक्रवर्ती की पौत्री तथा डॉ. बेनीमाधव चक्रवर्ती की पुत्री श्रीमती सुधादेवी के साथ अपने पुत्र की शादी तय कर दी। १६ अप्रैल सन् १९२२ को दोनों परिणय सूत्र में बँध गये।

शिक्षाविद्

श्री आशुतोष मुखर्जी चाहते थे कि उनका प्रतिभाशाली पुत्र या तो कानून के क्षेत्र में ख्याति अर्जित करे, अन्यथा शिक्षा के विकास में योगदान कर उनकी परम्परा को आगे बढ़ाये। एम.ए. पास करने के बाद उन्होंने श्यामाप्रसाद को कानून की पढ़ाई करने का आदेश दिया। १९२४ में उन्होंने बी.एल. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की और फिर वे कलकत्ता हाईकोर्ट में वकालत करने लगे।

प्रेसीडेन्सी कालेज की पत्रिका का सम्पादन करते समय वे पत्रकारिता की ओर आकर्षित हुए थे। उन्होंने 'बंगवाणी' नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन किया। जी. लावेल द्वारा संपादित 'कैपिटल' पत्रिका के लिए भी उन्होंने लेख लिखे।

श्री आशुतोष मुखर्जी श्यामाप्रसाद से विश्वविद्यालय के कुलपति के कार्य में सहयोग लेने लगे थे। अत: उन्हें विश्वविद्यालय के कामकाज का भी ज्ञान हो गया था।

श्री आशुतोष मुखर्जी सन् १९२३ में कलकत्ता हाईकोर्ट के न्यायाधीश पद से सेवानिवृत्त हो गये थे। कुछ ही दिन बाद बंगाल के गवर्नर लार्ड लिटन से उनके मतभेद गहराने लगे। स्वाभिमान की मूर्ति आशुतोष बाबू ने विश्वविद्यालय के उपकुलपति पद से त्यांग पत्र दे दिया।

उन्होंने सपना संजोया था कि वे अपने पुत्र श्यामाप्रसाद को शिक्षा एवं कानून के क्षेत्र में आगे बढ़ता देखेंगे। विधि का विधान कुछ और ही था। सन् १९२४ में आशुबाबू किसी कार्य से कलकत्ता से पटना गये हुए थे। अचानक पटना में उनका निधन हो गया। पिता की मृत्यु से श्यामाप्रसाद व्यथित हो उठे। उन्होंने उनके सपनों को साकार करने का दृढ़ संकल्प लिया।

उसी वर्ष सन् १९२४ में श्यामाप्रसाद जी को कलकत्ता विश्वविद्यालय

की सीनेट का सदस्य मनोनीत किया गया। वे अपने पिताश्री की तरह विश्वविद्यालय की प्रगति में भाग लेने लगे। वे बंगाली छात्रों को बंगला भाषा को महत्त्व देने की प्रेरणा व प्रोत्साहन देते थे। उनका यह दृढ़ विश्वास बन चुका था कि विदेशी भाषा अंग्रेजी पर निर्भर रहकर हमारी युवा पीढ़ी भारतीय संस्कारों व राष्ट्रीय भावना से पूरी तरह कट जायेगी। इसलिए वे भारतीय भाषाओं को महत्व दिये जाने के प्रबल समर्थक थे।

श्यामाप्रसाद जी ने कलकत्ता विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में भारतीय भाषाओं का प्रचुर साहित्य संकलित कराया। उन्होंने भारतीय ऋषि-महर्षियों के विषय में जानकारी देनेवाली विविध पुस्तकें मंगवाईं। धर्मशास्त्रों की प्रतियाँ भी पुस्तकालय के लिए मंगवाईं।

इस बीच उनके हृदय में इंग्लैंड जाकर कानून की उच्च शिक्षा प्राप्त करने की लालसा पैदा हुई। सन् १९२६ में वे इंग्लैंड जा पहुँचे।

श्यामाप्रसाद जी ने इंग्लैंड के न्यायशास्त्र की उच्च शिक्षा ग्रहण करते समय उन राष्ट्रभक्त भारतीयों से भी भेंट की, जो इंग्लैंड में रहकर भारतीय स्वाधीनता की अलख जगा रहे थे। उन्हीं दिनों डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन भी इंग्लैंड में अध्ययनरत थे। श्यामाप्रसाद जी की उनसे भेंट हुई तथा यह भेंट प्रगाढ़ मैत्री में बदल गयी।

सन् १९२६ में इंग्लैंड में ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत आनेवाले विश्वविद्यालयों का अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ था। श्यामाप्रसाद जी को उसमें कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि के रूप में भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ। उन्होंने वहां भी प्रत्येक देश के विश्वविद्यालयों में वहां के देश की विभिन्न भाषाओं को महत्त्व दिये जाने का सुझाव दिया।

न्याय की उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद वे अगले ही वर्ष सन् १९२७ में स्वदेश लौट आए।

कलकत्ता में कुछ दिन तक उन्होंने वकालत की, किन्तु उनकी रुचि शिक्षा के प्रति अधिक थी। अन्ततोगत्वा उन्होंने वकालत त्याग दी तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय की प्रगति के कार्य में पूरी तरह समर्पित भाव से लग गये।

वे अपने पिताश्री के विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम बंगला भाषा को बनाए जाने के सपने को मूर्त रूप देने में लग गये। कुछ अंग्रेजी समर्थक शिक्षाविद् तर्क देने लगे थे कि बंगलाभाषा में शब्दों का अभाव है, उसे कैसे दूर किया जाएगा? श्यामाप्रसाद जी ने बंगलाभाषा के विद्वानों की समिति नियुक्त की तथा 'बंग पारिभाषिक शब्दकोश' का निर्माण करवाया। उन्होंने विभिन्न विषयों की पुस्तकों का बंगलाभाषा में अनुवाद कराया। अपने इस कार्य के कारण वे बंगलाभाषियों में बहुत लोकप्रिय हो गये।

राजनीति में रुचि का प्रारम्भ

श्यामाप्रसाद मुखर्जी यथाशक्ति कांग्रेस के राष्ट्रीय आंदोलन में योगदान करने लगे। इसी बीच लाहौर में सरदार भगतसिंह द्वारा गुप्त रूप से प्रकाशित कराये गये वीर विनायक दामोदर सावरकर जी लिखित ग्रंथ 'सन् १८५७ का प्रथम स्वातंत्र्य समर' की प्रति उन्हें कहीं से प्राप्त हो गयी। विनायक दामोदर सावरकर, मदनलाल ढींगरा, श्यामजी कृष्णवर्मा, लाला हरदयाल, रासबिहारी बोस आदि के विषय में वे लंदन में रहने के दौरान काफी जानकारी प्राप्त कर चुके थे। १८५७ की क्रांति संबंधी ग्रंथ को पढ़कर उनके हृदय में सावरकर जी के प्रति अगाध श्रद्धा-भावना पैदा हो गयी थी।

सन् १९२९ में बंगाल विधान सभा के लिए चुनाव हुए। श्यामाप्रसाद जी कांग्रेस के प्रत्याशी के रूप में कलकत्ता विश्वविद्यालय का प्रतिनिधित्व करते हुए विधान सभा के लिए निर्वाचित किये गये। अगले वर्ष सन् १९३० में कांग्रेस ने विधान सभाओं के बहिष्कार का निर्णय लिया। श्यामाप्रसाद जी व्यक्तिगत रूप से इस निर्णय से सहमत नहीं थे। उनका स्पष्ट मत था कि राष्ट्रीय विचारों वाले सदस्यों के त्याग पत्र दे देने के बाद अंग्रेज सरकार राजभक्त भारतीयों को उनकी जगह विधानसभा सदस्य बना देगी। वे विश्वविद्यालयों में अंग्रेजों का हित साधन करेंगे। फिर भी क्योंकि वे कांग्रेस के टिकट पर चुने गये थे, इसीलिए नैतिक आधार पर उन्होंने विधानसभा की सदस्यता से त्याग पत्र दे दिया। वे चाहते थे कि विधानसभा में रहकर विश्वविद्यालय व राष्ट्रहित के कार्य

श्यामाप्रसाद जी ने उन्हीं दिनों अंग्रेजी साहित्य का अध्ययन किया। विश्वगुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर के काव्य ने उन्हें बहुत प्रभावित किया। बंकिमचन्द्र चटर्जी के उपन्यासों ने भी उन्हें आकर्षित किया।

उन्होंने सन् १९२१ में बी.ए. अंग्रेजी आनर्स के साथ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण ही नहीं किया, अपितु वे कलकत्ता विश्वविद्यालय में प्रथम आये।

श्यामाप्रसाद जी के अंग्रेजी ज्ञान को देखते हुए उनके हितैषी अंग्रेजी प्राध्यापकों ने उनसे एम.ए. अंग्रेजी में करने का सुझाव दिया। श्यामाप्रसाद को पता था कि उनके पिताश्री अंग्रेजी की जगह बंगला तथा एक अन्य भारतीय भाषा को महत्त्व देने के आकांक्षी रहे हैं। उसी के अनुरूप उन्होंने एम.ए. में बंगला भाषा तथा एक अन्य भारतीय भाषा को माध्यम बनाया।

सन् १९२३ में एम.ए. की परीक्षा भी उन्होंने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

२३ वर्षीय श्यामाप्रसाद मुखर्जी की असाधारण प्रतिभा की ख्याति पूरे बंगाल में फैलने लगी थी। अनेक बंगाली कुलीन ब्राह्मण श्री आशुतोष के पास श्यामाप्रसाद के विवाह के प्रस्ताव को लेकर पहुँचे। एक बंगाली ब्राह्मण जज अपनी पुत्री का संबंध श्यामाप्रसाद से करने के इच्छुक थे। किन्तु आशुबाबू ने सुविख्यात कवि बिहारी लाल चक्रवर्ती की पौत्री तथा डॉ. बेनीमाधव चक्रवर्ती की पुत्री श्रीमती सुधादेवी के साथ अपने पुत्र की शादी तय कर दी। १६ अप्रैल सन् १९२२ को दोनों परिणय सूत्र में बँध गये।

उपकुलपति मनोनीत

श्यामाप्रसाद मुखर्जी अपनी असाधारण प्रतिभा के कारण शिक्षाजगत में ख्याति प्राप्त कर चुके थे। वे कलकत्ता विश्वविद्यालय की प्रगति में पूर्ण रुचि लेते थे। उन्हें सन् १९३४ में कलकत्ता विश्वविद्यालय का उपकुलपति मनोनीत कर दिया गया।

उस समय उन्होंने भाव-विभोर होकर कहा था-''मेरे महान पिता (श्री आशुतोष मुखर्जी) ने इस पद पर रहकर इस विश्वविद्यालय की प्रगति के अनेक मानदण्ड स्थापित किये। मैं उन जैसी प्रतिभा व योग्यता नहीं रखता, फिर भी शायद पिताश्री के कुछ अधूरे कार्यों को पूरा करने में आंशिक सफलता पा सका, तो अपने को धन्य मानूंगा।''

उपकुलपति पद पर नियुक्त होने की सूचना मिलते ही श्यामाप्रसाद जी ने सबसे पहले अपनी माँ श्रीमती योगमाया देवी के चरण स्पर्श कर आशीर्वाद प्राप्त किया। माँ काली के सामने उन्होंने संकल्प लिया कि वे पूर्ण समर्पण भाव से शिक्षा के क्षेत्र में नये-नये प्रयोग कर शिक्षा को अधिकाधिक उपयोगी व सार्थक बनाने का प्रयास करेंगे।

उन्होंने सबसे पहले अंग्रेजी भाषा के एकाधिकार को समाप्त करके हिन्दी तथा बंगला आदि भारतीय भाषाओं को समुचित महत्त्व दिलाया। उन्होंने अपने स्वागत समारोह में कहा था-''संस्कृत भाषा हमारे देश की प्राचीन भाषा है। संस्कृत सभी भारतीय भाषाओं की जननी है। हिन्दी, बंगला, मराठी तथा दक्षिण की अनेक भारतीय भाषाओं में संस्कृत के शब्दों का बाहुल्य है। अत: हमें अपनी भारतीय भाषाओं को पूर्ण महत्त्व देना चाहिए। बंगाल के लोगों को अपने बच्चों को बंगला, हिन्दी तथा एक अन्य कोई भारतीय भाषा अवश्य सिखानी चाहिए।''

श्यामाप्रसाद जी को अन्तर्विश्वविद्यालय बोर्ड का अध्यक्ष मनोनीत किया गया। उन्हें कला एवं विज्ञान विभाग की स्नातकोत्तर परिषद् का सदस्य

मनोनीत किया गया। उन्हें पूर्वी भारत के विश्वविद्यालयों के प्रतिनिधि के रूप में इंडियन इंस्टीट्यूट आफ साइंस (बंगलौर) की प्रबंधकर्त्री सभा का सदस्य मनोनीत किया गया।

श्यामाप्रसाद जी कवि कुलगुरु श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर के विचारों, उनके साहित्य तथा शिक्षा प्रसार के कार्य से बहुत प्रभावित थे। वे प्रायः गुरुदेव के दर्शन के लिए उनके यहाँ जाया करते थे। गुरुदेव ने उनके अनुरोध को स्वीकार कर सन् १९३६ में कलकत्ता विश्वविद्यालय में बंगला भाषा में दीक्षान्त भाषण दिया। इतिहास में पहली बार अंग्रेजी की जगह भारतीय भाषा बंगला में दीक्षान्त भाषण हुआ था। पूरे बंगाल में श्यामाप्रसाद जी द्वारा की गयी इस पहल का स्वागत किया गया।

श्यामाप्रसाद जी भारतीय युवकों को बौद्धिक दृष्टि से समृद्ध बनाने के साथ-साथ शारीरिक दृष्टि से भी स्वस्थ बनाये जाने के आकांक्षी थे। वे चाहते थे कि छात्र खेलों में पूरी रुचि लें, सैन्य शिक्षा भी प्राप्त करें। उन्होंने उच्च शिक्षा की योजना में सैन्य प्रशिक्षण को स्थान दिलाया।

श्यामाप्रसाद जी ने कलकत्ता विश्वविद्यालय को भारतीय संस्कृति का शोध केंद्र बनाने का भरसक प्रयास किया। पुरातत्त्व विभाग के माध्यम से अनेक प्राचीन स्थलों की खुदाई कराकर प्राचीन सभ्यता के अवशेषों का संग्रह कराया। वे तिब्बत को बौद्ध धर्म का केंद्र मानते थे। उन्होंने तिब्बती और चीनी भाषा का अध्ययन शुरू कराया। देश के अनेक विश्वविद्यालय उनकी शिक्षा सेवा से प्रभावित थे। कलकत्ता विश्वविद्यालय ने उनकी अमूल्य सेवाओं के सम्मान में नवंबर १९३८ में उन्हें दीक्षान्त समारोह में 'डाक्टर आफ ला' की उपाधि से अलंकृत किया।

विश्वविद्यालय के कुलपति लार्ड बरबोर्न ने उनकी प्रशंसा करते हुए उन्हें अनूठी प्रतिभा का धनी तथा महान युवा शिक्षाविद् बताया था। हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक महामना पं. मदनमोहन मालवीय जी महाराज के प्रति डॉ. श्यामाप्रसाद जी श्रद्धा-भावना रखते थे। मालवीय महाराज के कानों तक उनकी शिक्षा सेवाओं के कार्यों की जानकारी पहुंची। मालवीय जी की इच्छा के अनुरूप हिन्दू विश्वविद्यालय ने उन्हें काशी आमंत्रित कर

१९३८ में उन्हें 'डी. लिट्' की उपाधि से सम्मानित किया। सन् १९३८ में राष्ट्र संघ (लीग आफ नेशंस) की बौद्धिक सहयोग समिति की ओर से डा. मुखर्जी का अभिनंदन किया गया।

डॉ. मुखर्जी की शिक्षा नीति

डॉ. मुखर्जी मूलत: शिक्षाविद् थे। शिक्षा की प्रगति के लिए जीवन समर्पित कर देने तथा अनूठी प्रतिभा के कारण वे मात्र ३३ वर्ष की आयु में ही कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति बनाये गये थे। उन्होंने शिक्षा को भारतीयों के लिए सार्थक बनाये जाने के अनेक मौलिक प्रयोग किये। रचनात्मक सुझाव देकर उन्होंने शिक्षा प्रणाली में अनेक परिवर्तन किये। उनके प्रयोगों, सद्प्रयासों तथा कठोर परिश्रम के कारण ही कलकत्ता विश्वविद्यालय विश्वविद्यालयों में अग्रगण्य बन पाया।

डॉ. मुखर्जी ने उपकुलपति बनते ही संपूर्ण शिक्षाक्रम को नवीन रूप देने का प्रयास शुरू कर दिया। उनकी पहल पर अंग्रेजी के स्थान पर मातृभाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाया गया। उनका स्पष्ट मत था कि विदेशी भाषा की अपेक्षा अपनी मातृभाषा के माध्यम से ही छात्र उपयुक्त ढंग से शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

२२ फरवरी १९३६ को कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति की हैसियत से द्वितीय दीक्षान्त भाषण देते हुए उन्होंने कहा था-"हमारा आदर्श है, निम्नतम भाव से उच्चतम भाव तक की शिक्षा के लिए व्यापक सुविधाएँ प्रदान करना। अपनी व्यवस्था को इस प्रकार ढालना कि हमारे शिक्षा संबंधी उद्‌देश्य पूर्ण हो सकें और अपने नवयुवकों के अविकसित श्रेष्ठ गुणों को पूर्णरूपेण विकसित कर बौद्धिक, शारीरिक एवं नैतिक दृष्टियों से उन्हें इस प्रकार प्रशिक्षित करना कि वे राष्ट्रोत्थान के कार्य के प्रत्येक क्षेत्र में, गांवों में, कस्बों में, शहरों में निष्ठापूर्वक अपनी सेवाएँ समर्पित कर सकें। हमारा आदर्श है, स्वस्थ उदार शिक्षा के लिए अधिकतम प्रोत्साहन देना। सांस्कृतिक शिक्षा तथा व्यावसायिक एवं शिल्पिक शिक्षा में सच्चा समन्वय इस बात को सर्वदा स्मरण रखते हुए करना कि कोई भी राष्ट्र केवल भौतिक लाभों को दृष्टि में रखकर, अपने नवयुवकों को यंत्र निर्मित वस्तु

मात्र बनाकर महान् नहीं हो सकता। हमारा आदर्श है अपने शिक्षकों को विपुल सुविधाएँ एवं विशेषाधिकार प्रदान करना, ताकि वे विद्या, चरित्र एवं स्वतंत्रता से समृद्ध होकर ज्ञानालोक के वाहक एवं व्याख्याता तथा विचार के नवीन क्षेत्रों के विजेता ही न बनें, बल्कि सच्चे एवं वीर, ईमानदार एवं देशभक्त, नेता एवं कार्यकर्ता, स्त्री-पुरुषों के निर्माता भी बनें। हमारा आदर्श है, अपनी संस्कृति एवं सभ्यता के श्रेष्ठ तत्वों से शिक्षा को संयुक्त करना तथा प्रयोजनानुसार पाश्चात्य ज्ञान के शिल्प के सदुपपोग से उसे शक्तिशाली बनाना। हमारा आदर्श है राज्य एवं जनता के उदार सहयोग से शिक्षण संस्थाओं की स्वतंत्रता तथा स्वस्थ एवं प्रगतिशील विचारों का अधिष्ठान बनाना, जहाँ शिक्षक और विद्यार्थी पारस्परिक सहयोग एवं सद्भावना के वातावरण में मिल-जुलकर कार्य करेंगे, जहाँ कोई भी वर्ण, लिंग, विश्वास तथा धार्मिक या राजनीतिक मतवाद के कारण वंचित नहीं किया जाएगा।''

डॉ. मुखर्जी ने दिल्ली विश्वविद्यालय में अपने दीक्षान्त भाषण में निम्न छह सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया था:-

(१). राज्य द्वारा शिक्षा विस्तार का दायित्व अविलंब ग्रहण किया जाना चाहिए। इसके लिए एक यूनिवर्सिटी ग्रान्ट्स कमीशन की स्थापना की जानी चाहिए, जिसके अधिकार में पर्याप्त कोष होना चाहिए। यह कमीशन विविध विश्वविद्यालयों को विविध सुधारों के लिए मुक्त हस्त से सहायता करे, किन्तु राजकीय सहायता का अर्थ विश्वविद्यालयों की स्वाधीनता का अपहरण नहीं होना चाहिए।

(२). अपनी-अपनी पृथक विशेषताओं के बावजूद विश्वविद्यालयों के अध्यापन और परीक्षण क्रम में एक सर्वस्वीकृत उचित स्तर का निर्वाह होना चाहिए। निरर्थक पिष्टपेषण और अपव्यय से बचना चाहिए।

(३). शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो, जहाँ यह संभव नहीं है वहाँ क्षेत्रीय भाषा के माध्यम से शिक्षा दी जानी चाहिए, किन्तु अंग्रेजी के विरुद्ध विद्वेष नहीं होना चाहिए।

(४). विभिन्न विश्वविद्यालयों में भिन्न-भिन्न विषयों की विशेषज्ञता

अर्जित करने का प्रयास होना चाहिए। विश्वविद्यालयों के प्राध्यापकों का योजना-पूर्वक पारस्परिक विनिमय होना चाहिए। इसी तरह एक विश्वविद्यालय के छात्रों को अन्य विश्वविद्यालय के परिदर्शन का अवसर मिलना चाहिए।

(५). विभिन्न विषयों में विशेषत: विज्ञान और शिल्प संबंधी विषय में विशेषज्ञता प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों और अध्यापकों को विदेश भेजना चाहिए। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ये विषय ऐसे हों जिनके संबंध में विशेषज्ञता प्राप्त करना स्वदेश में संभव नहीं है।

(६). ग्रेजुएट उपाधि प्राप्त करने के पूर्व प्रत्येक विद्यार्थी को अनिवार्य रूप से कुछ समय तक सामाजिक सेवा कार्य करना चाहिए, ताकि वे अपने देश की विषम परिस्थितियों से परिचित हो सकें और कर्मजीवन में प्रवेश कर उन्हें दूर करने का प्रयास कर सकें।

डॉ. मुखर्जी के उपरोक्त छह सूत्री शिक्षा संबंधी सुझावों का देश के सभी शीर्षस्थ शिक्षाविदों ने व्यवहारिक बताते हुए स्वागत किया था।

नागपुर विश्वविद्यालय में दीक्षान्त भाषण देते हुए उन्होंने कहा था-"मेरा दृढ़ विश्वास है कि उचित रूप से आयोजित एवं उदारतापूर्वक संवर्धित शिक्षा में ही हमारे देश की मुक्ति निहित है। आज भारत में शिक्षा का क्षेत्र, असीम सेवा और सक्रियता का जीवन व्यतीत करने के लिए सभी संप्रदायों और मतवादों के व्यक्तियों का आह्वान कर रहा है।"

डॉ. मुखर्जी के चिंतन मनन से प्रेरणा लेकर आगे चलकर शिक्षा के क्षेत्र में पदार्पण करनेवाले, कलकत्ता विश्वविद्यालय में अनेक वर्षों तक अध्यापन करनेवाले, जनसंघ में उनके साथ वर्षों तक कार्य करनेवाले अग्रणी शिक्षाविद् व राजनेता आचार्य विष्णुकांत शास्त्री ने उनकी शिक्षानीति के विषय में लिखा था-"डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी की शिक्षानीति पर विचार करने के पूर्व उनकी दृष्टि के अनुसार शिक्षा का आदर्श समझ लेना चाहिए। वे उसे शिक्षा नहीं समझते थे, जिसके द्वारा विविध विषयों की कुछ सूचनाएँ प्राप्त कर व्यक्ति सरकारी नौकरी या किसी व्यावसायिक पेशे के योग्य माना जाता था। उन्हें ज्ञात था कि मुख्यत: इसी उद्देश्य

को सामने रखकर मैकाले के परामर्श अनुसार अंग्रेज शासकों ने भारतवर्ष में विविध विश्वविद्यालय स्थापित किये थे, किन्तु भारत की मृत्युंजयी संस्कृति ने अपनी महत्ता से इस उद्देश्य को विफल सा कर दिया। इसी संस्कृति के प्रभाव से इस शिक्षा प्रणाली के द्वारा कुछ ऐसे लोग भी उत्पन्न हुए, जिन्होंने देशप्रेम की अखण्ड ज्वाला में अपनी आहुति देकर वह सामर्थ्य, वह शक्ति उत्पन्न की कि अन्ततोगत्वा विदेशियों को यहाँ से विदा होने के लिए विवश होना पड़ा किन्तु फिर भी यह सत्य है कि मैकाले की मोहिनी अंतत: सफल हुई और देश के साधारण शिक्षितों का एक वर्ग अंग्रेजों की नकल और गुलामी को सौभाग्य की चरम सीमा मानने लगा था। श्यामाप्रसाद ने निर्भयतापूर्वक इस असत् उद्देश्य की भर्त्सना की और इस बात की घोषणा की कि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य नौकरी की योग्यता उत्पन्न करना न होकर मनुष्य का सर्वांगीण विकास करना है। उसकी आत्मिक, नैतिक, मानसिक एवं भौतिक उन्नति का द्वार खोलना है। डॉ. श्यामाप्रसाद जी का दृढ़ विश्वास था कि शिक्षा स्थितिशील नहीं, गतिशील होनी चाहिए। उसका क्रम बदली हुई परिस्थितियों के अनुसार बदलना चाहिए, क्योंकि उसका जीवन से घनिष्ठ संबंध है। वह तोता रटन्त या अन्धी नकल न होकर वह दिव्य प्रकाश है, जिसके सहारे व्यक्ति और राष्ट्र अपना भविष्य बनाते हैं, मनुष्यता का विकास करते हैं। अत: उन्होंने भारत की वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार समस्त शिक्षाक्रम को नये साँचे में ढालने की भगीरथ चेष्टा की। उनका मूल सिद्धान्त यह था कि हमें ऐसी शिक्षा का प्रसार-प्रचार करना है, जिसके द्वारा शिक्षार्थियों के मन में अपने राष्ट्र, अपने इतिहास, अपनी संस्कृति और सभ्यता के प्रति श्रद्धा और आस्था जागे। इस श्रद्धा और आस्था को आधुनिक युग के ज्ञान विज्ञान से विभूषित कर वे शिक्षार्थियों को इतना समर्थ बनाना चाहते थे कि अपने गौरवमय अतीत के अनुरूप भव्य भविष्य का निर्माण कर सकें। इस श्रद्धा एवं आस्था से विहीन केवल यान्त्रिक, भौतिक तथा नकलवादी उन्नति को वे उन्नति नहीं मानते थे, क्योंकि इसमें हमारे स्व का तथा हमारी परम्परा का विकास न होकर विनाश निहित था।''

मुस्लिम तुष्टिकरण की नीति से खिन्न

डॉ. मुखर्जी पूरी तरह समर्पण की भावना से शिक्षा सेवा में सक्रिय थे, किन्तु राजनीतिक गतिविधियों पर भी वे पैनी नजर रखते थे।

सन् १९२९ में वे विश्वविद्यालय के क्षेत्र से कांग्रेस प्रत्याशी के रूप में विधान परिषद के सदस्य चुने गये थे। उस दौरान घटनेवाली राजनीतिक घटनाओं का विश्लेषण करते समय वे कांग्रेस की मुस्लिम तुष्टिकरण नीति से असहमति व्यक्त किया करते थे।

गांधी जी ने जब १९२१ में मुसलमानों के खिलाफत आंदोलन का समर्थन किया तथा केरल में मोपलाओं ने हिन्दुओं की नृशंस हत्याएं कीं तो डॉ. मुखर्जी ने अपने मित्रों के बीच विचार व्यक्त करते हुए कहा था-''मुस्लिम कट्टरवाद आगे चलकर देश के लिए घातक सिद्ध होगा।''

कांग्रेस के सन् १९२३ के काकीनाडा (आंध्र प्रदेश) अधिवेशन में सुविख्यात संगीतज्ञ श्री विष्णु दिगम्बर पुलस्कंर द्वारा वंदेमातरम गीत गाये जाने पर कांग्रेस अध्यक्ष मियाँ मोहम्मदअली द्वारा आपत्ति किये जाने की घटना ने भी डॉ. मुखर्जी के राष्ट्रभक्त हृदय को झकझोर डाला था।

सन् १९३७ में जब प्रांतीय विधान सभाओं में वंदेमातरम् का गायन हुआ तो कांग्रेस के मुस्लिम सदस्यों ने इसे इस्लाम विरोधी बताकर बहिष्कार किया। १५ अक्टूबर १९३७ को मुस्लिम लीग के अधिवेशन में मियाँ जिन्ना ने कहा,''वंदेमातरम् में बुतपरस्ती की बू आती है, अत: यह इस्लाम के विरुद्ध है। आज के बाद कोई भी मुसलमान इस गीत का एक शब्द भी उच्चारण नहीं करेगा।''

२८ अक्टूबर १९३७ को कलकत्ता में कांग्रेस वर्किंग कमेटी की बैठक में कुछ कांग्रेसी नेताओं ने वंदेमातरम् के प्रश्न पर मुस्लिम कट्टरपंथियों को छूट दिये जाने का मत व्यक्त किया, जबकि राष्ट्रकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर तथा नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने वंदेमातरम् गाये जाने पर आपत्ति करनेवालों की भर्त्सना की। कांग्रेस कट्टरपंथियों के समक्ष झुक गयी तथा वंदेमातरम् में काट-छांट किये जाने का निर्णय दे दिया गया।

सुविख्यात चिंतक तथा पत्रकार रामानंद चटर्जी तथा अरविंद घोष ने

कांग्रेस समिति के निर्णय को घातक बताकर उसकी निंदा की।

डॉ. मुखर्जी वंदेमातरम् जैसे प्रेरक राष्ट्रगीत का विरोध किये जाने तथा कांग्रेस द्वारा मुस्लिम कट्टरवाद के आगे घुटने टेक देने की नीति से मर्माहत हो उठे। उन्हें यह देखकर बहुत पीड़ा हुई कि कांग्रेस राष्ट्रहित की उपेक्षा कर कट्टरपंथी मुसलमानों के समक्ष निरन्तर घुटने टेकती जा रही है।

डॉ. मुखर्जी मुस्लिम लीग के अलगाववादी अभियान तथा कांग्रेसी नेताओं द्वारा उन्हें तुष्ट किये जाने की होड़ की घातक नीति का अवलोकन कर इस परिणाम पर पहुंच चुके थे कि देश के बहुसंख्यक हिन्दू समाज को संगठित कर उन्हें राजनीतिक दृष्टि से सचेत व जाग्रत किया जाना नितान्त आवश्यक है।

वे विनायक दामोदर सावरकर, भाई परमानंद महामना पं. मदनमोहन मालवीय जी तथा अन्य अनेक नेताओं के इस विचार से सहमति रखते थे कि कांग्रेस की मुसलमानों के आगे घुटने टेकने की नीति राष्ट्रहित के सर्वथा विपरीत है। डॉ. मुखर्जी का कांग्रेस से मोह भंग होता चला गया। वे यह अनुभव करने लगे थे कि यदि मुस्लिम तुष्टिकरण की होड़ लगी रही तो आगे चलकर मुस्लिम लीग देश को खण्डित कर नया इस्लामिस्तान बनाने का षड़यंत्र रच सकती है।

डॉ. मुखर्जी ने अपनी डायरी में लिखा–"१९३९ में चुनावों के समय हिन्दुओं के वोटों से जीतकर आने के बाद भी कांग्रेस ने हिन्दुओं के न्यायोचित हितों की अनदेखी कर मुस्लिम लीग का मंत्रिमंडल गठन होने दिया, इससे अधिक दुर्भाग्य की बात और क्या हो सकती है?''

वे यह जानते थे कि मुस्लिम लीग मंत्रिमंडल बनाकर शक्तिशाली बनेगी तथा वह कांग्रेस पर दबाव डालकर उसे ब्लैकमेल करने की स्थिति में आ जाएगी।

वीर सावरकर से प्रभावित

श्री निर्मलचंद्र चटर्जी उन दिनों कलकत्ता के अग्रणी वकील एवं हिन्दू महासभाई नेता थे।

विनायक दामोदर सावरकर को अण्डमान (कालापानी) से मुक्त कर रत्नागिरि (महाराष्ट्र) में नजरबंद के रूप में रखा गया था। सन् १९३७ में उन्हें रत्नागिरि से अन्यत्र कहीं भी जाने की छूट मिली।

श्री चटर्जी वीर सावरकर के त्याग तपस्यामय क्रांतिकारी जीवन के प्रति अनन्य श्रद्धा भावना रखते थे। उन्होंने कई बार अपने मित्रों के साथ रत्नागिरि जाकर सावरकर से भेंटकर उनसे प्रेरणा प्राप्त की थी।

डॉ. मुखर्जी निर्मलचंद्र चटर्जी के मित्र थे। चटर्जी ने १९३८ में वीर सावरकर को कलकत्ता आमंत्रित कर उनका अभिनंदन करने का निश्चय किया। डॉ. मुखर्जी ने सावरकर जी के अभिनंदन समारोह को सफल बनाने में योगदान किया।

उस दिन डॉ. मुखर्जी ने पहली बार सावरकर जी का ओजपूर्ण व राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत भाषण सुना। सावरकर जी ने अपने भाषण में कांग्रेस के नेताओं द्वारा मुस्लिम लीग के आगे निरन्तर घुटने टेकते रहने के दुष्परिणामों पर प्रकाश डाला था। उन्होंने स्पष्ट कहा था कि हिन्दुओं को जाग्रत होकर मुस्लिम लीग के अलगाववाद का अभी से डटकर प्रतिकार करना चाहिए अन्यथा देश को खण्डित करने का षड़यंत्र सफल हो जाएगा।

हिन्दू महासभा में शामिल

डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने सावरकर जी का भाषण सुनने के बाद निर्णय कर लिया कि वे मुस्लिम लीग तथा कांग्रेस की हिन्दू विरोधी नीतियों का विरोध हिन्दू महासभा में शामिल होकर ही प्रभावी ढंग से कर सकते हैं।

बंगाल में मुस्लिम लीग के उकसावे पर हिन्दुओं पर निर्मम अत्याचार ढाये जा रहे थे। डॉ. मुखर्जी ने हिन्दुओं के बीच पहुंचकर उन्हें आततायियों का प्रतिकार संगठित होकर करने की प्रेरणा दी।

अगले वर्ष सन् १९३९ में कलकत्ता में वीर सावरकर जी की अध्यक्षता में हिन्दू महासभा का २१वां राष्ट्रीय अधिवेशन हुआ। डॉ. मुखर्जी ने श्री निर्मलचंद्र चटर्जी के साथ मिलकर इस अधिवेशन को सफल बनाने में अहम भूमिका निभाई।

ढाका जा पहुंचे

श्री सावरकर डॉ. मुखर्जी के व्यक्तित्व, कृतित्व तथा उनके हृदय में पनप रही हिन्दुत्व की रक्षा की ज्वाला से सहज ही में प्रभावित हो गये थे। उन्होंने उन्हें बंगाल हिन्दू महासभा का अध्यक्ष मनोनीत कर दिया। उसी वर्ष सन् १९४० में उन्हें हिन्दू महासभा का राष्ट्रीय कार्यवाहक अध्यक्ष मनोनीत कर दिया गया।

उन्होंने देशभर का भ्रमण कर हिन्दूमहासभा का संदेश हिन्दुओं तक पहुंचाया। उन्हें पता चला कि मुस्लिम लीग की योजनानुसार ढाका में हिन्दुओं पर अमानवीय अत्याचार ढाये जा रहे हैं। वह हत्याकांड की लोमहर्षक घटनाओं की जानकारी मिलते ही बेचैन हो उठे। कई रात सो तक नहीं पाये।

उन्होंने ब्रिटिश चीफ सेक्रेटरी को पत्र लिखकर उन्हें हिन्दुओं का नर संहार किये जाने की जानकारी दी। साथ ही ढाका जाने की अनुमति मांगी। प्रयासों के बाद उन्हें ढाका जाने की अनुमति दी गयी।

ब्रिटिश सरकार चाहती थी कि डॉ. मुखर्जी ढाका न पहुंच सकें। उसने मुस्लिम लीग के मंत्रियों से भरा जहाज ढाका भेज दिया, किन्तु डॉ. मुखर्जी के जाने की व्यवस्था नहीं की।

डॉ. मुखर्जी ने जैसे-तैसे एक मिनी जहाज की व्यवस्था की। वे ढाका जा पहुंचे। उन्होंने पीड़ित हिन्दुओं के क्षेत्र में पहुंचकर उनका ढाढस बंधाया। हत्याओं, अत्याचारों व धर्मपरिवर्तन की जानकारी ली और उसी दिन वे ढाका के नवाब के महल में जा पहुंचे। नवाब बंगाल मुस्लिम लीग

के अध्यक्ष भी थे। डॉ. मुखर्जी ने नवाब से स्पष्ट शब्दों में कहा-"मैं ढाका में हिन्दुओं की की जा रही हत्याओं से पूरे देश को अवगत कराऊंगा। यदि इन हत्याओं की प्रतिक्रिया देश के किसी भी कोने में हुई, तो उसकी जिम्मेदारी मुस्लिम लीग की होगी।"

डॉ. मुखर्जी ने बंगाल विधान सभा में ढाका की घटनाओं का भंडाफोड़ किया। इसी के परिणामस्वरूप विधानसभा में सरकार ने ढाका में शांति स्थापित करने की घोषणा की।

सन् १९४० में डॉ. मुखर्जी नेताजी सुभाषचंद्र बोस के संपर्क में आये। नेताजी गांधी जी द्वारा किये गये अपने विरोध से खिन्न थे। मुस्लिम लीग द्वारा हिन्दुओं की हत्याएं कराये जाने की घटनाओं से भी वे मर्माहत थे। दोनों चाहते थे कि कलकत्ता कारपोरेशन के चुनाव में मुस्लिम लीग को हावी कदाचित् नहीं होने दिया जाएगा। नेताजी सुभाष कुछ ही दिनों बाद बंबई जाकर वीर सावरकर जी से मिले। सावरकर जी के परामर्श को मानते हुए वे गुप्त रूप से विदेश चले गये। बंगाल विधान सभा के चुनाव में २५० सदस्यों में से ८० हिन्दू सदस्य सफल हुए थे। अधिकांश हिन्दू सदस्य कांग्रेस के टिकट पर चुनाव जीते थे। मुसलमान सदस्यों में से कुछ मुस्लिम लीग के टिकट पर तथा कुछ मौलाना फजलुलहक की कृषक प्रजा पार्टी के टिकट पर चुनाव जीते थे। कांग्रेस ने अपने हिन्दू सदस्यों के बल पर मुस्लिम लीग की सरकार न बनने देने का कोई प्रयास नहीं किया। परिणामत: फजलुलहक तथा मुस्लिम लीग ने सरकार बनाने में सफलता प्राप्त कर ली। कुछ ही दिनों में फजलुलहक तथा मुस्लिम लीग के बीच मतभेद शुरू हो गया। डॉ. मुखर्जी मुस्लिम लीग की सरकार को देश व हिन्दुओं के लिए घातक मानते थे। उन्होंने चाणक्य नीति का अनुसरण किया तथा फजलुलहक का समर्थन कर १९ दिसंबर १९४१ को गैर मुस्लिम लीगी सरकार के गठन में अहम भूमिका निभाई।

बंगाल मंत्रिमंडल में शामिल

अधिकांश गैर कांग्रेसी हिन्दू विधायकों ने डॉ. मुखर्जी की इस योजना में सहयोग दिया। इस नये मंत्रिमंडल में फजलुलहक मुख्यमंत्री तथा डॉ.

मुखर्जी वित्त मंत्री बनाये गये। उन्होंने एक मंत्री के नाते हिन्दुओं का उत्पीड़न न होने देने की कड़ी व्यवस्था कराई।

ब्रिटिश शासन तंत्र बंगाल में उसकी इच्छा के विरुद्ध गैर मुस्लिम लीगी मंत्रिमंडल बनने से परेशान हो उठा। वह पग-पग पर इस सरकार के रास्ते में कांटे बिछाने लगा। गवर्नर तरह-तरह की बाधाएं डालने का प्रयास करने लगा। डॉ. मुखर्जी ने वित्त मंत्री के नाते वित्तीय सुधार के लिए अनेक कदम उठाकर लोकप्रियता अर्जित की।

इसी बीच, दिसंबर १९४१ में भागलपुर में हिन्दूमहासभा के अधिवेशन की घोषणा की गयी। विनायक दामोदर सावरकर जी की अध्यक्षता में सम्मेलन हुआ। बिहार सरकार ने सम्मेलन पर प्रतिबंध लगाने की घोषणा कर दी। डॉ. मुखर्जी हिन्दू महासभा के वरिष्ठ नेता होने के नाते भागलपुर गये। उन्होंने अधिवेशन पर प्रतिबंध लगाये जाने के विरुद्ध वीर सावरकर जी के नेतृत्व में प्रदर्शन करते हुए गिरफ्तारी दी। उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। पहली बार एक राज्य सरकार का मंत्री दूसरे प्रांत की सरकार द्वारा गिरफ्तार किया गया था। डॉ. मुखर्जी की इस सिद्धांतनिष्ठा को देखकर सभी चकित थे।

मुस्लिम लीग ने डॉ. मुखर्जी के भागलपुर महासभा में अधिवेशन पर प्रतिबंध के विरोध में गिरफ्तारी देने के मामले को खूब तूल दिया। प्रचार किया कि डॉ. मुखर्जी हिन्दू महासभा के मंच से मुस्लिमों के विरोध में आग उगलते हैं। ऐसे व्यक्ति को मौलाना फजलुलहक के मंत्रिमंडल में रखना शर्मनाक है।

डॉ. मुखर्जी ने उत्तर देते हुए कहा-''जो मुस्लिम लीग स्वयं संकीर्ण तथा उन्माद फैलाने वाली है, उसे दूसरों पर आरोप लगाने का कोई अधिकार नहीं है। मैं हिन्दुओं को मुसलमानों के विरुद्ध नहीं भड़काता अपितु उन्हें गुण्डों व आततायियों से अपनी रक्षा के लिए संगठित व शक्तिशाली होने को कहता हूं।''

अचानक विश्वयुद्ध शुरू हो गया। बंगाल के लिए भी जापानी आक्रमण का खतरा पैदा होता जा रहा था। डॉ. मुखर्जी तथा वीर सावरकर ने

विचार-विमर्श किया कि यदि बंगाल को जापान के आक्रमण से बचाने के नाम पर ज्यादा से ज्यादा बंगालियों-बिहारियों को सेना में भरती कराकर सैनिक दृष्टि से प्रशिक्षित किया जा सके, तो भविष्य में इसका लाभ प्राप्त होगा।

डॉ. मुखर्जी ने ७ मार्च १९४२ को गवर्नर सर जान हरबर्ट को अपने पत्र में लिखा-"इंगलैंड और भारत वर्ष के बीच तुरन्त समझौता हो जाना चाहिए, जिससे भारतीय यह अनुभव कर सकें कि यह सचमुच में जनता का युद्ध है और अगर हमें युद्ध में विजय पानी है तो अविलंब एक प्रतिनिधि राष्ट्रीय सरकार का गठन होना चाहिए जो भारत के हितों की दृष्टि से भारतीय प्रतिरक्षा की नीतियों का अधिकारपूर्वक संचालन कर सके।

"हमें बंगाल की रक्षा के लिए गृह सेना के निर्माण का अधिकार मिलना चाहिए। भारत के हित का विचार ही सबसे पहले होना चाहिए। नीति के निर्धारण में भारत के हितों को ही प्रमुख प्रेरक बनने दीजिए, तभी वे इसे भारत का युद्ध मानकर सहयोग देंगे।''

डॉ. मुखर्जी के पत्र से उनकी निर्भीकता तथा स्पष्टवादिता का ज्वलंत प्रमाण मिलता है। उन्होंने गवर्नर को स्पष्ट लिखा कि भारत के हितों की अनदेखी करके शासन नहीं किया जा सकता।

सर क्रिप्स से भेंट

मार्च १९४२ में ब्रिटिश सरकार ने युद्ध संबंधी नीतियों को स्वीकृत कराने के उद्देश्य से सर स्टेफोर्ड क्रिप्स के नेतृत्व में एक प्रतिनिधिमंडल भारत भेजा। मि. क्रिप्स ने हिन्दू महासभा, कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग के नेताओं से अलग-अलग बातचीत की। वीर सावरकर के नेतृत्व में सर क्रिप्स से मिले प्रतिनिधिमंडल में डॉ. बी एस मुंजे तथा डॉ. मुखर्जी भी शामिल थे। डॉ. मुखर्जी तथा सावरकर जी ने अकाट्य तर्क प्रस्तुत कर स्पष्ट कहा कि अब ब्रिटेन द्वारा भारतीयों के हितों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। भारतीय तभी सहयोग दे सकते हैं जब उन्हें स्वाधीन किये जाने का आश्वासन दिया जाए।''

क्रिप्स योजना में पहली बार धर्म के आधार पर भारत विभाजन का प्रस्ताव रखा गया था। हिन्दू महासभा तथा कांग्रेस दोनों ने राष्ट्र को खंडित करने वाले इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया।

बंगाल के गवर्नर जॉन हर्बर्ट अपने एजेंटों से फजलुलहक सरकार को मुस्लिम विरोधी बताकर मुस्लिम लीग के पक्ष में वातावरण बनाने की कुटिल चाल में लगे हुए थे। ब्रिटिश और मुस्लिम लीगी विचारों के सरकारी अधिकारी तक इस षड़यंत्र में शामिल थे। गवर्नर चाहते थे कि ऐसी स्थिति पैदा हो जाए कि फजलुलहक सरकार त्याग पत्र दे दे, जिससे पुन: मुस्लिम लीग की सरकार बन सके।

डॉ. मुखर्जी गवर्नर हर्बर्ट के इस षड़यंत्र को सहन नहीं कर पा रहे थे। उन्होंने जुलाई १९४२ में गवर्नर को दूसरे पत्र में लिखा-"आपने मो. फजलुलहक और उनके सहकर्मियों को कोई भी समर्थन नहीं दिया, वरन् समय-असमय आप मुस्लिम लीग का ही समर्थन करते रहे। मुस्लिम लीग के पक्ष में एक वकील की तरह किया गया आपका आचरण अधिनायकवादी जैसा है। आप गवर्नर की तरह निष्पक्ष व्यवहार न करके मुस्लिम लीग के सचेतक जैसा व्यवहार कर रहे हैं, जो सर्वथा अशोभनीय है।

मैंने राष्ट्रवादी जनमत, विशेषकर हिन्दू संपद्राय को संघबद्ध करने का जो अनुरोध आपसे किया था, उसके प्रति आपने कोई रुचि नहीं ली।''

डॉ. मुखर्जी ने जापान से हो रहे युद्ध तथा भारत पर जापान के संगठित आक्रमण से बचाव की तैयारी के संबंध में निर्भीकता के साथ लिखा-'यदि ब्रिटेन और उसके भारत स्थित प्रतिनिधि पारस्परिक संबंध और भारत की स्वाधीनता के अधिकार को स्वीकार करें तभी युद्ध में सहयोग मिल सकता है।''

ब्रिटेन के भारत के शासन में भारतीय और अंग्रेज सैनिकों तथा अधिकारियों के वेतन में भारी असमानता थी। डॉ. मुखर्जी ने गवर्नर को पत्र में लिखा-"भारतीय और अभारतीय सैनिकों के बीच वेतन की असमानता रखना क्या उचित है? एक भारतीय सिपाही को मासिक वेतन १६ रुपये मिलता है, जबकि अंग्रेज को ९० रुपये मासिक। उच्चाधिकारियों

के वेतन में भी इसी प्रकार भारी असमानता है। इसके परिणामस्वरूप असंतोष की सृष्टि होना स्वाभाविक है।''

क्रिप्स मिशन असफल हुआ तथा कांग्रेस ने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध भारत छोड़ो आंदोलन चलाने की घोषणा कर दी। डॉ. मुखर्जी लखनऊ में छह अगस्त को हुई हिन्दू महासभा की कार्यकारिणी की बैठक में भाग लेने के बाद रेल से कलकत्ता लौट रहे थे। गांधी जी अगले दिन रेल से मुंबई जा रहे थे। रास्ते में इलाहाबाद स्टेशन पर मुखर्जी ने गांधी जी से भेंट की तथा भारत छोड़ो आंदोलन के प्रति सहानुभूति व्यक्त की।

९ अगस्त को मुंबई में जैसे ही कांग्रेस कार्यकारिणी ने भारत छोड़ो प्रस्ताव पारित किया तो गांधी जी समेत तमाम कांग्रेसी नेता गिरफ्तार कर जेल भेज दिये गये। सरकार ने पूरे देश में कांग्रेस कार्यकर्ताओं का उत्पीड़न शुरू कर दिया। तमाम राज्यों के गवर्नरों को आंदोलन को सख्ती से दबाने के आदेश दिये गये।

एक दिन बंगाल के गवर्नर सर जॉन हार्वर्ड ने बंगाल सरकार के मंत्रियों की बैठक में कहा-"सरकार की नीति का पालन करते हुए भारत छोड़ो आंदोलन का खुला विरोध करो। जो मंत्री विरोध करने को तैयार न हो उसे तुरन्त मंत्रिमंडल से त्यागपत्र दे देना चाहिए।''

डॉ. मुखर्जी ने निर्भीकता से उत्तर दिया-"भले ही हमारे कांग्रेस से मतभेद हैं, किन्तु यह आंदोलन न्यायोचित है। हम इसका विरोध कदापि नहीं करेंगे।''

डॉ. मुखर्जी ने १२ अगस्त १९४२ को लार्ड लिनलिथगो को अपने पत्र में लिखा-"कांग्रेस का प्रस्ताव, जिसमें भारत को स्वाधीन करने की बात कही गयी है, वह केवल कांग्रेस का नहीं, समस्त भारतीयों के हृदय की अभिव्यक्ति है। इस विषय में विदेशी पत्र-पत्रिकाओं द्वारा किया जा रहा कुप्रचार कि कांग्रेस का प्रस्ताव जापान को निमंत्रण है, विपक्षी देश के समक्ष आत्मसमर्पण है, ठीक नहीं है।

"स्वाधीनता संग्राम में लगे समस्त देशों के इतिहास से यह शिक्षा ली जानी चाहिए कि शासक शक्ति जितनी दमन नीति का आश्रय लेती है,

जन आंदोलन की प्रतिशोध शक्ति उतनी ही वेग से बढ़ती जाती है।

"भारत के वर्तमान शासन तंत्र से कोई भी संतुष्ट नहीं है। भारत की राजनीतिक उथल-पुथल को समाप्त करने के लिए भारतीयों को अपने देश का संचालन करने का अधिकार देना ही विकल्प है।

"ब्रिटिश सरकार ने गांधी जी के साथ किसी प्रकार की बातचीत करना अस्वीकार कर दिया है। ब्रिटिश सरकार के इस निर्णय को मैं दुर्भाग्यपूर्ण मानता हूँ।''

डॉ. मुखर्जी ने पत्र के अंत में अपने निम्न दस सूत्री सुझाव दिये:

१. ब्रिटिश सरकार यह घोषणा करे कि भारत की स्वाधीनता स्वीकृत हो गयी है।

२. भारत की राष्ट्रीय सरकार के गठन के लिए भारत के विभिन्न राजनीतिक दलों के साथ विचार-विनिमय का दायित्व बड़े लाट या मंत्रिमंडल के किसी प्रतिनिधि को दिया जाए, जिसके फलस्वरूप भारत की राष्ट्रीय सरकार का गठन हो।

३. भारत की राष्ट्रीय सरकार की शक्ति को स्वीकार करके यह घोषणा की जाए कि भारत को सम्मिलित किये बिना शत्रु से किसी प्रकार की संधि नहीं होगी।

४. मित्र राष्ट्रों की युद्ध परिषद में भारत का प्रतिनिधित्व रहेगा। भारत की सामरिक नीति परिषद की सामरिक नीति की अनुयायी होगी।

५. प्रधान सेनापति भारत के युद्ध कार्यकलापों का नेतृत्व करेंगे और मित्र राष्ट्रों की सामरिक परिषद की साधारण नीति को कार्य रूप में परिणित करेंगे! भारत की राष्ट्रीय सरकार एक राष्ट्रीय सेना का गठन कर सकती है, जिसका उद्देश्य भारत की आंतरिक स्थिति को इस प्रकार बनाये रखना होगा, जिससे विदेशी आक्रमण के विरुद्ध इसकी रक्षा हो सके।

६. राष्ट्रीय सरकार सभी राजनीतिक दलों के विचार विनिमय के फलस्वरूप गठित होगी। देश के सभी उल्लेखनीय दलों के प्रतिनिधि उसमें रहेंगे। इसी प्रकार प्रादेशिक सरकारों का भी गठन होगा।

७. केंद्रीय और प्रादेशिक मंत्रिमंडल के समस्त पद युद्ध व्यवस्था परिषद

के सदस्यों के बीच ही में सीमित रहेंगे।

८. भारतवर्ष, जिस तरह से युद्ध चल सकते हैं, उस उद्‌देश्य से राष्ट्रीय सरकार की शस्त्रों के निर्माण और अर्थनीति की उन्नति के संबंध में सक्रिय नीति का अवलंबन करेगा।

९. भारतीय कार्यालय समाप्त कर दिया जाएगा।

१०. भविष्य में शासन तंत्र के निर्धारण के लिए राष्ट्रीय सरकार एक गण परिषद के गठन की व्यवस्था करेगी। ग्रेट ब्रिटेन और भारत के बीच एक संधि होगी, जिसमें कि बहुसंख्यकों और अल्पसंख्यकों की मांगों और न्याय संगत अधिकारों की रक्षा के लिए एक ट्रिब्यूनल का आयोजन होगा।

आज भारत का जन-जन जाग्रत है और ब्रिटिश सरकार भारत पर शासन बंदूक की नोक पर नहीं कर सकती। यदि वह भारतवर्ष और मित्र राष्ट्रों की ओर से कोई भी प्रस्ताव स्वीकार करती है तो वह भारत के हित में होना चाहिए।

मातृभूमि की स्वाधीनता की रक्षा के लिए युद्ध करने की क्षमता हमारे हाथ में न देना, ऐसी व्यवस्था से भारत संतुष्ट न होगा। शत्रु की पराजय, प्रत्येक भारतवासी निश्चित रूप से चाहता है। मैंने बंगाल के गवर्नर को यह बतला दिया है कि वर्तमान संकट काल में ब्रिटिश सरकार और उसके प्रतिनिधि जिस नीति का अनुसरण कर रहे हैं, उसका मैं अनुमोदन नहीं करता। मैं आपसे यही निवेदन करता हूं कि आप मिथ्या मर्यादा के प्रश्न को लेकर रास्ता रोक कर खड़े न हों और इस अस्थिर राजनीतिक स्थिति को शीघ्र की समाप्त करने की व्यवस्था करें। यदि आप यह सोचते हैं कि इस अचल अवस्था के रखने के अतिरिक्त ब्रिटिश सरकार के सामने और कोई रास्ता नहीं है तो मैं दु:ख के साथ गवर्नर से अनुरोध करूंगा कि वे मुझे मंत्रिपद से मुक्त करें, ताकि मैं उन उपायों के लिए प्रयत्न कर सकूं, जिससे जनमत जाग्रत हो और देश पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त कर सके।

मैं आशा करता हूँ कि दोनों पक्ष मिलकर, किसी एक निर्णय पर पहुंचेंगे। यदि यह युद्ध मानवीय सभ्यता के श्रेष्ठ कृतित्व को ध्वंस करने

को उद्यत है, तो इस युद्ध को पराजित करने में सहायक होना हमारा कर्तव्य है।

ब्रिटेन सरकार के प्रतिनिधि के रूप में मैं और आप इस संकट के समाधान की योग्यता का परिचय दें, यही मेरी कामना है। जिससे कि भारत ब्रिटिश के साथ सहयोगी हो सके और भारत के एक विराट अंश का जनमत इसमें योगदान कर सके।''

डॉ. मुखर्जी ने भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान गिरफ्तार देशभक्तों के प्रति खुली सहानुभूति प्रकट की।

बंगाल तथा अन्य राज्यों का दौरा करके उन्होंने आंदोलन में जेल भेजे गये कार्यकर्ताओं के परिवारों में पहुंचकर न केवल सहानुभूति व्यक्त की वरन् उनको आर्थिक सहायता भी पहुंचाई।

तूफान पीड़ितों की सेवा

१० अक्टूबर को मिदनापुर जिले में भयंकर तूफान आया। असंख्य व्यक्ति तूफान में फंस जाने या मलबे में दब जाने के कारण मारे गये। मिदनापुर के जिला मजिस्ट्रेट एनएम खान ने तूफान पीड़ितों की मदद करने की बजाय दमन चक्र शुरू कर दिया, जिससे कोई सेवा संगठन सहायता को तत्पर न हो सके। एक वर्ग विशेष के लोगों को भड़का कर आगजनी कराई गयी, लूटमार मचाई गयी। डॉ. मुखर्जी ने यह स्थिति देखी तो उनका हृदय हाहाकार करने लगा।

डॉ. मुखर्जी स्वयंसेवकों की टीम लेकर तूफान प्रभावित क्षेत्रों में पहुंचे। उन्होंने हजारों पीड़ितों को असमय मृत्यु के मुंह में जाने से बचाने में सफलता पायी। उनके लिए भोजन, कपड़ा तथा तंबुओं की व्यवस्था करायी। वे पूरे एक माह तक पीड़ितों की सहायता कार्य में जुटे रहे।

तूफान पीड़ितों पर ढाये गये नृशंस अत्याचारों की घटनाओं ने डॉ. मुखर्जी के हृदय को झकझोर डाला था। उनकी अन्तरात्मा ने कहा कि यदि सरकार में मंत्री रहते हुए वे ऐसी अमानवीय प्रवृत्ति को सहन करते हैं तो अच्छा उदाहरण नहीं होगा। इससे तो अच्छा है कि वे विधान सभा में विरोधी सदस्यों के साथ बैठकर गवर्नर के विरुद्ध आक्रोश व्यक्त करते

हुए अपना कर्तव्य पालन करें।

डॉ. मुखर्जी ब्रिटिश सरकार द्वारा अगस्त १९४२ के स्वाधीनता सेनानियों के विरुद्ध दमन चक्र चलाए जाने से भी क्षुब्ध थे। उन्होंने अपने श्रद्धेयास्पद वीर सावरकर जी से परामर्श करने के बाद बंगाल के गवर्नर सर जॉन हार्बर्ट को १६ नवंबर १९४२ को मंत्रिमंडल से त्यागपत्र भेज दिया।

उन्होंने त्यागपत्र में लिखा-"मैंने ९ अगस्त को ही स्पष्ट कर दिया था कि मैं ब्रिटिश सरकार की कांग्रेसी नेताओं को गिरफ्तार करने की नीति से पूर्णत: असहमत हूँ।

"दूसरा कारण यह है कि आप पग-पग पर मंत्रिमंडल के कार्य में हस्तक्षेप करते रहे हैं। मुस्लिम लीग को हस्तक बनाकर पूरे बंगाल में असंतोष की स्थिति पैदा करते रहे हैं। इसे मैं सहन नहीं कर पा रहा हूँ।''

डॉ. मुखर्जी ने आगे लिखा-"यदि अपने देश को स्वाधीन देखने की आकांक्षा रखना अपराध है, तो मैं तथा अन्य स्वाभिमानी भारतीय अपराधी हैं।''

त्यागपत्र में उन्होंने मिदनापुर के तूफान पीड़ितों पर ढाये गये अत्याचारों का वर्णन करते हुए लिखा-"मैं आप जैसे अयोग्य व अक्षम गवर्नर तथा निष्ठुर व संवदेनहीन उच्च सरकारी कर्मचारियों के निष्ठुर हस्तक्षेप को ज्यादा सहन करने के लिए अब तैयार नहीं हूँ।''

मंत्री पद के दायित्व से मुक्त होने के बाद मुखर्जी बंगाल में पड़े भीषण दुर्भिक्ष से पीड़ित लोगों की सेवा में जुट गये।

संघ संस्थापक डॉ. हेडगेवार जी से भेंट

डॉ. मुखर्जी ने सन् १९३४ में, जब कलकत्ता में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा शुरू हुई, पहली बार संघ संस्थापक डॉ. हेडगेवार जी से भेंट की थी।

हिन्दू महासभा में सक्रिय होने के बाद वे डॉ. केशवराव बलिराम हेडगेवार जी तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के निकट संपर्क में आये। वीर

सावरकर तथा डॉ. मुंजे आदि संघ के हिन्दू संगठन के कार्य के प्रशंसक थे। डॉ. मुखर्जी २० मई १९४० को डॉ. हेडगेवार जी से भेंट करने नाग. पुर पहुंचे। उन्होंने रात्रि के नौ बजे डॉ. हेडगेवार जी से उनके निवास स्थान पर भेंट की। डॉ. साहब की मुखर्जी से भेंट के समय श्री माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर (श्री गुरुजी) तथा श्री अप्पा जी जोशी आदि उपस्थित थे। डॉक्टर साहब को तीव्र ज्वर था। फिर भी वे डॉ. मुखर्जी के मुख से काफी समय तक बंगाल में मुस्लिम लीग सरकार द्वारा कराये जा रहे हिन्दुओं के उत्पीड़न का वर्णन सुनते रहे। डॉ. मुखर्जी ने कहा कि मैं आज स्वयं हिन्दू संगठन के कार्य को राष्ट्रीय कार्य मानकर इसी को सफल बनाने में जुटा हुआ हूँ। मुखर्जी ने नागपुर में चल रहे संघ शिक्षावर्ग शिविर का भी अवलोकन किया तथा स्वयंसेवकों के बीच उनका ओजस्वी भाषण भी हुआ। उन्होंने आश्वासन दिया कि वे बंगाल में संघ कार्य को गति देने में पूर्ण योगदान करेंगे। डॉ. मुखर्जी ने उसी वर्ष कलकत्ता के निकट संघ का छह सप्ताह का शिक्षण केंद्र आयोजित कराया। पूरे एक माह बाद डॉ. हेडगेवार जी का निधन हो गया। डॉ. मुखर्जी को इससे भारी आघात लगा। मिदनापुर में आये भीषण तूफान से पूरे बंगाल में खाद्यान्न की स्थिति बिगड़ती जा रही थी।

फसलें पूरी तरह चौपट हो गयी थीं। जुलाई १९४३ में तो बंगाल एक प्रकार से दुर्भिक्ष की चपेट में आ गया। लोग अन्न के दाने-दाने के लिए मोहताज बन गये।

डॉ. मुखर्जी ने हिन्दू महासभा के तत्त्वावधान में राहत समिति की स्थापना की। सर बद्रीनाथ गोयनका की अध्यक्षता में बंगाल रिलीफ कमेटी का गठन किया गया। डॉ. मुखर्जी को इसका उपाध्यक्ष बनाया गया। रामकृष्ण मिशन, आर्य समाज, मारवाड़ी सोसायटी, बंग सनातनधर्म सभा आदि संगठन भी अकाल पीड़ितों की सेवा में जुट गये।

डॉ. मुखर्जी के आह्वान पर देश के सभी भागों से धन व सामग्री बंगाल पहुंचने लगी। बंगाल में फजलुलहक मंत्रिमंडल की जगह मुस्लिम लीग की सरकार बन चुकी थी। अंग्रेज गवर्नर व मुस्लिम लीग की सरकार ने

दुर्भिक्ष से उत्पन्न विषम परिस्थिति को गंभीरता से नहीं लिया। सरकार की ओर से कोई कार्य शुरू नहीं किया गया। मुस्लिम लीग की सरकार ही खाद्यान्न के अभाव से उत्पन्न इस दुर्भिक्ष के लिए जिम्मेदार थी।

डॉ. मुखर्जी ने बंगाल विधान सभा में जब दुर्भिक्ष से लाखों लोगों के मर जाने का कारुणिक वर्णन किया तथा सरकार पर संवेदनहीनता का आरोप लगाया तो अनेक सदस्य रो पड़े।

डॉ.मुखर्जी को एक दिन श्री निर्मलचंद्र चटर्जी ने अपने निवास स्थान पर बुलवाया। वहाँ हिन्दू महासभा, आर्यसमाज तथा रामकृष्ण मिशन के अनेक सदस्य उपस्थित थे।

उन्होंने प्रमाण देकर बताया कि मुस्लिम लीग तथा खाकसार संगठन के लोग गांवों में पहुंचकर दुर्भिक्ष पीड़ित हिन्दुओं को अनाज आदि का प्रलोभन देकर उन्हें धर्मान्तरित कर मुसलमान बना रहे हैं। सभी ने धर्मान्तरण के इस घातक षड़यंत्र को असफल बनाने में जुटने का निर्णय लिया। हिन्दू महासभा व आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं ने गांव-गांव पहुंचकर धर्मान्तरण के कुचक्र से लोगों को सावधान किया।

डॉ. मुखर्जी ने विधान सभा में कहा-''इस प्राकृतिक आपदा में भी कट्टरपंथी लोगों द्वारा धर्मपरिवतन के प्रयास मानवता विरोधी हैं। ऐसे प्रयासों को रोका जाना चाहिए।''

अगस्त १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन के सिलसिले में कांग्रेस के वरिष्ठ नेता जेलों में बंद थे। इसी दौरान केंद्रीय असेंबली में कांग्रेस दल के नेता श्री भूला भाई देसाई तथा मुस्लिम लीग के नेता मियां लियाकत अली खां के बीच यह समझौता हो गया था कि कांग्रेस मुसलमानों को केंद्र में हिन्दुओं के बराबर प्रतिनिधित्व देने को तैयार है। इससे मुस्लिम लीग के हौंसले बुलंद हो गये तथा उसने भारत विभाजन की योजना बनानी शुरू कर दी।

एंग्लो इंडियन नेताओं तथा मुस्लिम लीग में गठजोड़ हो गया था कि ब्रिटिश शासन पर दबाव बनाकर शीघ्र से शीघ्र भारत विभाजन की तैयारियां शुरू कर दी जाएं।

हिन्दू महासभा ने भारत विभाजन की मांग के विरोध में जन जागरण अभियान शुरू कर दिया। वीर सावरकर, डॉ. मुंजे तथा डॉ. मुखर्जी ने अनेक नगरों में सभाओं में भाषण कर भारत विभाजन को भारत राष्ट्र के साथ विश्वासघात बताकर कांग्रेस की ढुलमुल नीति का घोर विरोध किया। उन्होंने आरोप लगाया कि कांग्रेस सत्ता प्राप्ति की लालसा में भारत भूमि को खण्डित करने की मुस्लिम लीग की मांग के सामने घुटने टेक चुकी है।

हिन्दू महासभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष

दिसंबर १९४३ में अमृतसर में हिन्दूमहासभा का २५वां अधिवेशन हुआ। वीर सावरकर सातवीं बार हिन्दू महासभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष निर्वाचित किये गये थे। अचानक सावरकर जी अस्वस्थ हो गये। उन्होंने अपने स्थान पर डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी को अधिवेशन की अध्यक्षता करने का दायित्व सौंपा। सावरकर जी उनकी अनूठी प्रतिभा, असाधारण व्यक्तित्व तथा हिन्दुत्व के प्रति समर्पण के भाव से अत्यधिक प्रभावित थे। वे चाहते थे कि भविष्य में डॉ. मुखर्जी ही हिन्दू महासभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष के दायित्व का निर्वहन करें।

दिसंबर के अंत में अमृतसर में हिन्दू महासभा का २५वां अधिवेशन हुआ। पंजाब के विख्यात नेता डॉ. गोकुलचंद नारंग अधिवेशन की स्वागत समिति के अध्यक्ष थे। कैप्टन केशवचंद्र नारंग कार्यकारी अध्यक्ष थे।

डॉ. मुखर्जी को हाथी पर बैठाकर शोभा यात्रा शुरू हुई। लाखों लोग शोभा यात्रा में शामिल थे। सनातनधर्म सभा, आर्यसमाज तथा महावीरदल के स्वयंसेवक शोभा यात्रा की व्यवस्था में जुटे हुए थे।

अचानक पुलिस के एक अधिकारी ने वहाँ पहुंचकर सूचना दी कि महावीर दल के स्वयंसेवक सैनिक वर्दी में हैं। इस आधार पर शोभायात्रा की स्वीकृति निरस्त की जाती है। स्वागत समिति ने शोभायात्रा को रोकने से इंकार कर दिया। पुलिस ने जुलूस में शामिल लोगों पर लाठियां बरसानी शुरू कर दीं। सभी लोगों में इससे आक्रोश व्याप्त हो गया। शोभा यात्रा स्थगित कर डॉ. मुखर्जी को अधिवेशन स्थल पर ले जाया गया। जहां

डॉ. मुखर्जी ने अपने संबोधन में चेतावनी दी–"अंग्रेज अधिकारियों व मुस्लिम लीग की सांठगांठ से शोभायात्रा पर प्रतिबंध लगाकर इस अधिवेशन में बाधा डालने का जो दुष्प्रयास किया गया है, उसे कदापि सहन नहीं किया जाएगा।"

डॉ. मुखर्जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा–"ब्रिटेन और उसके सहयोगी जापान आदि के विरुद्ध स्वतंत्रता के सिद्धांत को लेकर युद्धरत हैं, तब उन्हें भारत को पराधीन रखने का क्या अधिकार है। भारत को तुरन्त सत्ता हस्तांतरित कर तमाम राजनीतिक बंदियों को जेलों से रिहा करके केंद्र में जनता के प्रति उत्तरदायी सरकार का गठन कर देना चाहिए।"

उन्होंने चेतावनी देते हुए कहा–"यदि कांग्रेस मुस्लिम लीग को प्रसन्न (तुष्ट) करने के लिए उसकी हर बात मानते हुए घुटने टेकती रही तो इसके दुष्परिणाम देश की एकता-अखण्डता के भंग होने के रूप में सामने आएंगे। देश का विभाजन यदि स्वीकार कर लिया गया, तो इतिहास हमें कभी क्षमा नहीं करेगा। पाकिस्तान की मांग के आधार पर मुस्लिम लीग से समझौता किया जाना बहुत ही घातक सिद्ध होगा।"

उन्होंने वीर सावरकर जी के हिन्दू युवकों के सेना में भर्ती होने तथा सैन्य प्रशिक्षण लेने के प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा–"सावरकर जी तथा हिन्दू महासभा भारत को सैनिक दृष्टि से सशक्त राष्ट्र बनाये जाने के आकांक्षी हैं। सैनिक प्रशिक्षण से संपन्न युवक ही अपने राष्ट्र पर संकट के समय उसकी रक्षा करने में समर्थ होते हैं। अत: ज्यादा से ज्यादा युवकों को भारतीय सेना में भर्ती होकर सैन्य प्रशिक्षण लेना चाहिए।"

डॉ. मुखर्जी ने कुछ समय पूर्व ही हिन्दू महासभा की शोभा यात्रा पर लगाये गये प्रतिबंध को चुनौती देते हुए कहा–"मैं सरकार के कान खोलना चाहता हूं कि जब इसी अमृतसर नगरी में जलियाँवाला बाग का नृशंस हत्याकांड करने के बाद भी पंजाब पुलिस हमारे अरमानों को नहीं कुचल सकी तब वह क्यों फिर से हिन्दुत्व की शक्ति को तोलना चाहती है। सिख गुरुओं की वीर भूमि में क्या वह हमसे फिर बलिदान लेना चाहती है?

अभी तो सरहिंद की वह दीवार नहीं गिरी है, जिसमें गुरुपुत्र धर्म रक्षार्थ चिने गये थे। अभी तो स्यालकोट के मैदानों से धर्मवीर हकीकतराय के बलिदान की ध्वनि सुनाई दे रही है। अभी तो रावी की लहरों में भगतसिंह, राजगुरु व सुखदेव के शरीरों की राख पूरी तरह मिल भी नहीं पायी है। अभी गुरु गोविंदसिंह और बंदा वैरागी के अरमान ढीले नहीं पड़े हैं। फिर क्यों यह विदेशी सरकार हमें, हमारे स्वाभिमान को चुनौती देना चाहती है? सरकार और उसके पिट्‌ठू कान खोलकर सुन लें लाठी और गोलियों के बल पर हिन्दू समाज की भावनाओं को दबाया नहीं जा सकता।''

आर्य सम्मेलन की अध्यक्षता

डॉ. मुखर्जी हिन्दू समाज के विभिन्न संप्रदायों में अत्यंत लोकप्रिय हो चुके थे। आर्यसमाज भी उनकी ओर आशा भरी दृष्टि से निहार रहा था। जब सिंध की मुस्लिम लीगी सरकार ने स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा रचित 'सत्यार्थ प्रकाश' के चौदहवें समुल्लास पर प्रतिबंध लगाया तो वीर सावरकर तथा डॉ. मुखर्जी ने आगे आकर इस प्रतिबंध का डटकर विरोध किया था।

२० फरवरी १९४४ को दिल्ली में आर्य महासम्मेलन के पांचवें अधिवेशन का निर्णय लिया गया। आर्यसमाज की विभिन्न संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने डॉ. मुखर्जी से अध्यक्षता का प्रस्ताव रखा, जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

डॉ. मुखर्जी ने अधिवेशन में उपस्थित देश के विभिन्न राज्यों से आये लाखों प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए कहा-''महर्षि दयानंद सरस्वती ने वैदिक (हिन्दू) धर्म के प्रचार-प्रसार तथा समाज में प्रचलित अंधविश्वास, अस्पृश्यता, पाखण्ड जैसी भ्रांत धारणाओं का मूलोच्छेदन करने के उद्देश्य से आर्यसमाज की स्थापना की थी। वे प्रत्येक आर्य को स्वदेश, स्वभाषा तथा अपनी महान संस्कृति के प्रति निष्ठावान बनाकर उनके हृदय में स्वाभिमान जाग्रत करने के आकांक्षी थे। वे चाहते थे कि प्रत्येक भारतवासी अपने देश की महान संस्कृति तथा सभ्यता के प्रति निष्ठावान बने। आर्यसमाज ने देश में स्वाभिमान जाग्रत करने, शिक्षा का प्रसार करने,

दुर्व्यसनों व कुरीतियों का उन्मूलन करने के लिए जो कार्य किये वे सराहनीय हैं।'' डॉ. मुखर्जी ने देश की स्वाधीनता के लिए किये जा रहे प्रयासों का समर्थन करते हुए कहा-''स्वामी दयानंद जी ने देश की स्वाधीनता व राष्ट्रवाद की अलख जगाई थी। जब वे स्वभाषा व स्वदेशी का समर्थन करते थे तब स्वत: देश की स्वाधीनता का मंत्र गुंजायमान हो उठता था। उनके उपदेशों से प्रेरणा लेकर ही असंख्य आर्य बंधुओं ने राष्ट्रीय जागरण में योगदान दिया है।''

गांधीजी तथा अन्य कांग्रेसी नेता जेलों से मुक्त किये गये। गांधीजी ने भारत विभाजन के फार्मूले का कांग्रेस द्वारा समर्थन किये जाने का विरोध नहीं किया, उल्टे उसके समर्थन में वक्तव्य जारी कर दिया। जिन्ना के भारत विभाजन प्रस्ताव का विरोध करने की बजाय उन्होंने जिन्ना की प्रशंसा कर मुसलमानों में लोकप्रिय होने का सपना देखा।

एक दिन उन्होंने यहाँ तक घोषणा कर डाली कि वे हिन्दू-मुस्लिम एकता का सपना पूरा करने के लिए मोहम्मद अली जिन्ना से भेंट करने उनके निवास स्थान पर जाएंगे। गांधीजी की इस तुष्टिकरण नीति से मुस्लिम लीग का दु:साहस और बढ़ गया।

गांधी जी को पत्र

डॉ. मुखर्जी ने गांधीजी को मुस्लिम लीग को प्रोत्साहन देनेवाली नीति त्याग देने का सुझाव देते हुए १९ जुलाई १९४४ को निम्न पत्र लिखा:-

प्रिय महात्मा जी,

पत्रवाहक श्री मनोरंजन चौधरी आपके पास बंगाल की स्थिति के संबंध में कुछ नोट और पर्चे लेकर आ रहे हैं। राजनीति और खाद्यान्न के प्रश्नों पर बंगाल में जो घटनाएं हुई हैं, ये उन पर प्रकाश डालेंगे। आपके विचारार्थ सभी प्राप्तव्य सामग्री इनके हाथ भेजी जा रही है।

सच तो यह है कि मिस्टर राजगोपालाचारी द्वारा मिस्टर जिन्ना को दिये गये प्रस्ताव से हमें बहुत क्षोभ हुआ है। हम उचित हिन्दू-मुस्लिम समझौते के लिए बहुत उत्सुक हैं, किन्तु श्री राजगोपालाचारी जो रास्ता अपना रहे हैं उससे लक्ष्य प्राप्ति होगी हमें विश्वास नहीं। अपने अनुभवों

के आधार पर भी आप जानते ही होंगे कि मिस्टर जिन्ना कोई खेल खेलने के इच्छुक हैं। वे अपने आपको भारतीय नहीं मानते और समग्र भारत की स्वतंत्रता से, जिसके लिए भारतीयों की कई पीढ़ियों ने अपना जीवन होम दिया है, उनका कोई संबंध नहीं है। हमारे लिए बंगाल और भारत का संभावित विभाजन घृणास्पद है। अस्तु! हमें इससे बहुत दु:ख हुआ है कि बिना विभिन्न दृष्टिकोण को परखे आप भी उक्त प्रस्ताव से सहमत दिखाई पड़ रहे हैं। हम आपको कांग्रेस से महान मानते हैं और इस स्थिति में आपकी कोई भी स्वीकृति हम सबके लिए उद्वेगजनक हो जाती है। बंगाल की विभिन्न राजनीतिक संस्थाओं के बहुत से लोगों की इस विषय पर जो विचारधारा है, मनोरंजन बाबू उससे आपको अवगत करायेंगे। हमें भय है कि मिस्टर जिन्ना इस प्रस्ताव से अनुचित लाभ उठाते हुए हिन्दुस्तान और तथाकथित पाकिस्तान के क्षेत्रों में और रियायत लेने की कोशिश करेंगे। उत्पीड़न और उलझन ही जिसका परिणाम होगा। ब्रिटिश सरकार आपके कथनानुसार इसमें हस्तक्षेप नहीं करेगी, क्योंकि उसे अपनी सत्ता से मोह है। मिस्टर जिन्ना भी सक्रिय नहीं होंगे, क्योंकि वे नहीं चाहते कि गतिरोध समाप्त हो, किन्तु आपका विभाजन का सिद्धांत मान लेने का प्रस्ताव दुर्भाग्यपूर्ण है, जिससे हमारी भावी कठिनाइयां और बढ़ेंगी।

मेरा आपसे अनुरोध है कि आप अपने निर्णय पर पुनर्विचार कीजिए। अगर मिस्टर जिन्ना और मुस्लिम लीग को आपकी शर्तें मान्य नहीं हैं, तो आप उनका अनुमोदन छोड़कर अखण्ड भारत का समर्थन कीजिए। भारत विभाजन की किसी भी योजना के विरुद्ध १९४२ के 'हरिजन' (पत्र) में आपने विचार स्पष्ट रूप से रखे थे। आपने ठीक ही लिखा था कि ऐसे किसी प्रस्ताव से हम लोगों में नये झगड़े उत्पन्न होने की आशंका रहेगी।

मेरा विचार है कि आपको भारत की स्वाधीनता के लिए सभी दलों और जातियों के सहयोग से अपनी योजना प्रस्तुत कर देनी चाहिए। जो लोग अल्पमतों के हितों की पूर्ण सुरक्षा के साथ पूरे भारत की

स्वाधीनता के समर्थक हैं, उन्हें इस योजना को लोकप्रिय बनाने का आह्वान करना चाहिए। अनेक मुसलमान आज तक यह समझ रहे हैं कि पाकिस्तान बनना असंभव और निरर्थक वितण्डावाद है। ब्रिटिश सरकार भी केवल अपनी सुविधानुसार मिस्टर जिन्ना को समर्थन देती है। ऐसे नाजुक समय में आप मिस्टर जिन्ना को, जो केवल मुस्लिम दृष्टिकोण से ही सोचते हैं, पृष्ठपोषण दे रहे हैं। इससे उन मुसलमानों को, जो राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर भारतीय स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते रहे हैं, जबर्दस्त धक्का लगा है।

मुझे आशा है कि जिन प्रान्तों में हिन्दू अल्पसंख्यक हैं, आप वहाँ उनकी शोचनीय परिस्थिति से अवगत होंगे ही। आपका कथन है कि उन शर्तों की स्वीकृति देते समय आपने अपने को एक हिन्दू नहीं एक भारतीय माना है।

यदि आप एक भारतीय होने के नाते मुसलमानों की मांग का विशेष ध्यान रख मिस्टर जिन्ना को खुश करने के लिए तैयार हैं, तब मैं भी एक हिन्दू होने के नाते हिन्दुओं के न्यायोचित और वैध अधिकारों की रक्षा करने के लिए आपसे क्यों न निवेदन करूं?

यदि आप एक भारतीय हैं और आपका हिन्दू अथवा मुसलमानों की किसी समस्या से संबंध नहीं है, तो आपको अनिवार्यत: मुस्लिम लीग की बिलकुल अवहेलना कर देनी चाहिए और उन लोगों को सहयोग देना चाहिए, जो केवल भारतीय हैं और कुछ नहीं।

भवदीय,

श्यामाप्रसाद मुखर्जी

गांधी जी ने इस पत्र का उत्तर नहीं दिया।

गांधीजी से भेंट

पुणे में हिन्दू महासभा का भव्य कार्यक्रम था। वीर सावरकर जी ने डॉ. मुखर्जी को परामर्श दिया कि वे पुणे से कलकत्ता लौटते समय वर्धा में रुककर गांधीजी से भेंट कर भारत विभाजन की घातक स्वीकृति न देने का अनुरोध करें। अगस्त में डॉ. मुखर्जी वर्धा पहुंचे। उन्होंने गांधीजी

से कहा–"आप यदि जिन्ना से मिलने गये तो उसका दुस्साहस बढ़ जाएगा। अत: आप जिन्ना से न मिलें।''

गांधीजी ने उनका अनुरोध अस्वीकार कर दिया।

उन्होंने स्पष्ट कहा–"धर्म के आधार पर देश का बंटवारा अनेक भीषण समस्याएं खड़ी करेगा।'' देश का बंटवारा स्वीकार कर नया इस्लामिस्तान बनाये जाने के खतरों से उन्होंने गांधीजी को अवगत कराया। गांधीजी ने उन्हें विश्वास दिलाया कि वे देश का बंटवारा कदापि स्वीकार नहीं करेंगे।

डॉ. मुखर्जी देश के विभिन्न भागों का भ्रमण कर भारत विभाजन के विरोध में जन जागरण अभियान में जुट गये, क्योंकि उन्हें पूर्वाभास था कि विशेष रूप से पंजाब व बंगाल के भाग पाकिस्तान में मिलाये जाने की घोषणा होते ही हिन्दुओं पर कहर बरपाया जाएगा। उनकी हत्याएं की जाएंगी। उनका धर्मपरिवर्तन किया जाएगा। उनके संबंधी इस कहर के शिकार बनेंगे।

पंजाब के युवा हिन्दू नेता श्री हरदयाल देवगुण ने उन्हीं दिनों लुधियाना में विशाल हिन्दू सम्मेलन आयोजित करने का संकल्प लिया। उनके आमंत्रण पर डॉ. मुखर्जी कलकत्ता के महापौर देवेन्द्रनाथ मुखर्जी तथा बसंतकुमार राय के साथ लुधियाना आए। डॉ. बालकृष्ण मुंजे तथा विष्णुघनश्याम देशपाण्डे ने भी हिन्दू सम्मेलन में भाग लिया।

डॉ. मुखर्जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में चेतावनी देते हुए कहा–"कांग्रेस ने खिलाफत आंदोलन का समर्थन करके मियाँ जिन्ना के सामने बार-बार घुटने टेक कर मुस्लिम लीग का दु:साहस बढ़ाया है। इस मुस्लिम तुष्टिकरण की घातक नीति का ही यह परिणाम है कि अंग्रेजों के संकेत पर मुस्लिम लीग देश को खंडित कर पाकिस्तान बनाने की मांग कर रही है। यदि पाकिस्तान, जिसे हम 'इस्लामिस्तान' कह सकते हैं, बना तो बंगाल, पंजाब तथा सिंध के असंख्य हिन्दुओं को विनाश का सामना करना पड़ेगा।''

लुधियाना में डॉ. मुखर्जी द्वारा की गयी सिंह गर्जना ने लाखों हिन्दुओं को सचेत किया।

दिसंबर १९४४ में बिलासपुर में हिन्दू महासभा का २६वाँ राष्ट्रीय अधिवेशन डॉ. मुखर्जी की अध्यक्षता में हुआ। डॉ. मुखर्जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा-"ऐसी परिस्थिति बनने लगी थी कि मुसलमानों का एक बड़ा समुदाय भी भारत विभाजन का विरोधी होने लगा था, मियाँ जिन्ना तथा मुस्लिम लीग का प्रभाव क्षीण होने लगा था। अचानक गांधीजी ने सीआर फार्मूले का समर्थन कर अदूरदर्शिता का परिचय दिया। इससे मुस्लिम लीग के मृतप्राय: जीवन में नई जान पड़ गयी। मुस्लिम लीग अब नयी-नयी मनमानी मांगें लेकर सामने आ रही है। मियाँ जिन्ना राजगोपालाचारी (राजाजी) के फार्मूले को स्वीकार करने की और कीमत मांग रहे हैं।

"यदि हम सिद्धांत रूप से यह स्वीकार कर लेते हैं कि भारत के किसी भी भाग में इस्लाम के अनुयायियों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में शासन का हिस्सा दिया जाए तो अन्य जातियां भी ऐसी ही मांग उठाकर देश के खण्ड-खण्ड, टुकड़े-टुकड़े करने को तत्पर हो उठेंगी। इससे देश की शांति नष्ट होगी तथा समृद्धि विनाश में परिणत हो जाएगी। दूसरी प्रान्तीय इकाइयों को स्वाधीनता मिल जाने पर देश परस्पर विरोधी टुकड़ों में बंट जाएगा और केंद्रीय सत्ता कमजोर हो जाएगी।" डॉ. मुखर्जी ने भारत विभाजन को सांप्रदायिकता की समस्या का हल बतानेवालों को चुनौती देते हुए कहा-"भारत का विभाजन कर पाकिस्तान बनाये जाने से पूरा देश मजहबी उन्माद की चपेट में आ जायेगा। हमेशा-हमेशा के लिए सांप्रदायिक सौहार्द नष्ट हो जायेगा। इससे गृहयुद्ध की संभावना पैदा होगी।

"यह जान लेना आवश्यक है कि भारत विभाजन कर पाकिस्तान बनाये जाने की मांग के पीछे इस्लामिकरण की योजना काम कर रही है। इस घातक योजना को स्वीकार करने से निकृष्टतम मजहबी उन्माद तथा मदान्धता घोर अनर्थ के रूप में सामने आयेगी।"

डॉ. मुखर्जी ने कांग्रेस को सुझाव दिया कि वह कट्टरपंथी मुस्लिम लीग के आगे आत्मसमर्पण बंद कर उदारवादी मुस्लिमों सहित सभी राष्ट्रवादी तत्त्वों को एकत्र कर ब्रिटेन के साम्राज्यशाही मंसूबों का विरोध करने के

लिए आगे आकर राष्ट्रीय मोर्चा बनाए। कांग्रेस ने डॉ. मुखर्जी के सुझाव पर कोई ध्यान नहीं दिया। वह मुस्लिम लीग को ही मुसलमानों की एकमात्र प्रतिनिधि संस्था मानने के पूर्वाग्रह पर अडिग रही।

अखण्ड भारत सम्मेलन में

वीर सावरकर से विचार-विमर्श करने के बाद दिल्ली में ७ और ८ अक्टूबर १९४४ को विशाल अखण्ड भारत सम्मेलन का आयोजन किया गया। हिन्दू महासभा भवन में आयोजित सम्मेलन की अध्यक्षता सुविख्यात विचारक डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी ने की। इस ऐतिहासिक सम्मेलन में पुरी के जगद्गुरु शंकराचार्य, जगद्गुरु वल्लभाचार्य गोस्वामी कृष्ण जीवन जी, सिख नेता मास्टर तारासिंह, डॉ बालकृष्ण शिवराम मुंजे, जमनादास मेहता, कल्याण के संपादक भाई हनुमानप्रसाद पोद्दार आदि ने भी उपस्थित रहकर भारत विभाजन का कड़ा विरोध किया।

वीर सावरकर तथा डॉ. मुखर्जी आदि ने स्पष्ट चेतावनी दी कि कांग्रेसी नेता मुस्लिम लीग से भारत विभाजन कराने का समझौता कर चुके हैं। अत: इनके झूठे झांसे में आकर भारत विभाजन का देशव्यापी विरोध किया जाना चाहिए।

गांधीजी के अनन्य विश्वासपात्र चक्रवर्ती राजगोपालाचारी मियाँ जिन्ना व मुस्लिम लीग की धर्म के आधार पर अलग देश पाकिस्तान बनाये जाने की मांग का समर्थन कर ही चुके थे। उधर केंद्रीय असेम्बली में कांग्रेस दल के नेता भूलाभाई देसाई और मुस्लिम लीग के नेता लियाकतअली के बीच समझौता हो चुका था कि कांग्रेस मुसलमानों को केंद्र में हिन्दुओं के बराबर प्रतिनिधित्व देने को तैयार है।

गवर्नर जनरल लार्ड वेवल द्वारा शिमला में आयोजित कांफ्रेंस से एक दिन पूर्व २४ जून १९४५ को पुणे में हिन्दू महासभा की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक वीर सावरकर जी की अध्यक्षता में हुई। डॉ. मुखर्जी ने वेवल योजना को राष्ट्रविरोधी, लोकतंत्र विरोधी तथा हिन्दू विरोधी बताते हुए इसका देशव्यापी विरोध करने का आह्वान किया। उन्होंने कहा कि शिमला कांफ्रेंस साम्राज्यवादी अंग्रेजों, मुस्लिम लीग तथा कांग्रेस के

षड़यंत्र से बनी देश विभाजन की योजना को अंतिम रूप देने के लिए ही आयोजित की जा रही है, हिन्दू महासभा इसका प्रबल विरोध करेगी।

२५ जून को शिमला में गवर्नर जनरल लार्ड वेवल द्वारा आहूत कांफ्रेंस में मुस्लिम लीग और कांग्रेस के बीच हुए समझौते पर विचार विचार-विमर्श कर उसे अंतिम रूप दिया जाना था।

परिषद के लिए मुस्लिम लीग, कांग्रेस, अकाली दल, अनुसूचित जाति सभा आदि के प्रतिनिधियों को आमंत्रित किया गया, किन्तु हिन्दुओं की एकमात्र प्रतिनिधि संस्था हिन्दू महासभा को आमंत्रित नहीं किया गया। इसका कारण यही था कि हिन्दू महासभा भारत विभाजन का कड़ा विरोध कर रही थी।

कांग्रेस की ओर से राजा जी राजगोपालाचारी, मौलाना अबुल कलाम आजाद, मुस्लिम लीग की ओर से मियाँ जिन्ना और लियाकतअली खाँ, सिखों की ओर से मास्टर तारासिंह तथा अनुसूचित जातियों की ओर से शिवराज शिमला सम्मेलन में भाग ले रहे थे।

डॉ. मुखर्जी ने इस सम्मेलन के विरोध में वक्तव्य देते हुए कहा-"वायसराय वेवल मुस्लिम लीग व कांग्रेस को कठपुतली बनाकर देश के विभाजन और कट्टरपंथी मजहबी देश पाकिस्तान के निर्माण का तानाबाना बुन रहे हैं। हिन्दू महासभा को इस षड़यंत्र में बाधक मानकर नहीं बुलाया गया है। यह शिमला सम्मेलन देश की अखंडता को खंडित करनेवाला साबित होगा।"

डॉ. मुखर्जी ने तेज तर्रार युवा नेता श्री हरदयाल देवगुण को पंजाब से दिल्ली बुलाया। उन्होंने उन्हें आदेश दिया कि वे छात्रों का एक दल साथ लेकर शिमला पहुंचें। वहाँ वायसराय भवन के सामने उस समय काले झण्डे दिखाकर विरोध करें, जब देश की अखण्डता भंग करने की दुरभि संधि बनाई जा रही हो।

श्री हरदयाल देवगुण ५० युवकों को साथ लेकर पंजाब से शिमला पहुंच गये। सम्मेलन के समय वायसराय भवन के सामने पहुंचकर उन्होंने अखंड भारत अमर रहे, हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व हिन्दू महासभा ही कर सकती

है जैसे नारे लगाते हुए प्रदर्शन किया। कांग्रेस के नेता राजाजी, मौलाना आजाद तथा गोविन्दवल्लभ पंत, मुस्लिम लीग के नेता जिन्ना तथा लियाकतअली जैसे ही वहां पहुंचे उन्हें काले झण्डे दिखाते हुए भारत विभाजन के विरोध में नारों से आसमान गुंजा दिया। प्रदर्शन के बाद मास्टर तारासिंह तथा केंद्रीय असमेंबली में नेशनलिस्ट पार्टी के नेता पीएन बनर्जी ने प्रदर्शनकारियों के नेता हरदयाल देवगुण के पास पहुंचकर उन्हें बधाई देते हुए कहा-"यह अच्छा हुआ कि कुछ राष्ट्रभक्त युवक तो ऐसे निकले जिन्होंने भारत विभाजन की अदूरदर्शी व घातक योजना का विरोध कर राष्ट्र की अखण्डता का स्वर गुंजाया।''

अगले दिन तमाम समाचार पत्रों में वायसराय सहित सभी नेताओं को काले झण्डे दिखाने तथा अखण्ड भारत का स्वर गुंजाने का समाचार प्रकाशित हुआ। डॉ. मुखर्जी ने तार भेजकर श्री हरदयाल देवगुण व उनके युवा साथियों को इस कर्तव्य पालन के लिए बधाई दी।

ब्रिटेन में चर्चिल की जगह मिस्टर एटली प्रधानमंत्री पद पर अधिष्ठित किये गये। कांग्रेस ने पूना प्रस्ताव में देश का विभाजन स्वीकार कर लिया। सरदार पटेल ने विभाजन का विरोध किया, किन्तु उनका स्वर निष्प्रभावी हो गया।

कांग्रेस अभी भी ऊपर से यही घोषणा करती रही कि वह यथासंभव भारत विभाजन न होने देने का प्रयास कर रही है, किन्तु अंदर ही अंदर सत्ता प्राप्ति की लालसा में वह भारत विभाजन को स्वीकार कर चुकी थी। वेवल कांफ्रेंस असफल हो गयी थी। एटली सरकार ने एक उच्चाधिकार प्राप्त प्रतिनिधिमंडल भारत भेजा, जिसे भारत को स्वाधीनता दिये जाने तथा भारत का नया संविधान बनाने के लिए संविधान सभा के गठन में सहयोग देने का काम सौंपा गया।

लार्ड वेवल ने केंद्रीय असेंबली और प्रांतीय असेंबलियों के चुनाव कराने की घोषणा कर दी। मुसलमानों और हिन्दुओं के लिए पृथक-पृथक मतदान का प्रावधान किया गया। सन् १९४५ के अंत में और १९४६ के शुरू में चुनाव हुए। ९१ प्रतिशत मुस्लिम मतदाताओं ने मुस्लिम लीग को वोट

देकर पाकिस्तान की मांग का समर्थन कर दिया। सरदार पटेल ने डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी से भेंट कर सुझाव दिया था कि वे हिन्दु महासभा के प्रत्याशी चुनाव में खड़े न कर हिन्दुओं से कांग्रेस को वोट देने को कहें। सरदार पटेल ने यह भी कहा कि वे भारत विभाजन को रोके जाने का भरपूर प्रयास करेंगे।

डॉ. मुखर्जी ने मुसलमानों की मुस्लिम लीग के पक्ष में एकजुटता देखते हुए हिन्दुओं की भलाई कांग्रेस के पक्ष में ही मतदान किये जाने में समझी। डॉ. मुखर्जी ने हिन्दू महासभा के प्रत्याशी खड़े नहीं किये। वे स्वयं कलकत्ता के विश्वविद्यालय क्षेत्र से बंगाल विधान सभा के लिए चुन लिये गये।

मुस्लिम लीग ने मुस्लिम बहुल बंगाल, सिंध तथा पंजाब में बहुमत हासिल किया। इस जीत से मुस्लिम लीग के हौंसले बुलन्द हो गये। उसने भारत विभाजन कर पाकिस्तान बनाये जाने की मांग और तेजी से शुरू कर दी। कांग्रेस पूना प्रस्ताव में मान चुकी थी जिन क्षेत्रों में मुस्लिम लीग को बहुमत मिले तथा जो क्षेत्र भारत में न रहना चाहें वे अलग हो सकते हैं। इस आत्मघाती प्रस्ताव ने भारत विभाजन की मांग करनेवालों को बल प्रदान किया।

हिन्दू महासभा तथा डॉ. मुखर्जी को यह समझते हुए देर नहीं लगी कि मुस्लिम लीग पंजाब तथा बंगाल के उन भागों को भी पाकिस्तान का अंग बनाने की तैयारी करेगी, जहाँ हिन्दू बहुलता में हैं। मुस्लिम लीग ने ब्रिटिश अधिकारियों से सांठगांठ कर कलकत्ता से हिन्दुओं को आतंकित कर भगाने की योजना बना डाली।

१६ अगस्त १९४६ का दिन तय कर कलकत्ता में भीषण आतंक फैलाने के लिए मारकाट व आगजनी की घटनाएं की गयीं। डॉ. मुखर्जी जान गये थे कि बंगाल, पंजाब और सिंध पाकिस्तान का अंग बनाये जाने हैं। अत: उन्होंने बंगाल, पंजाब व सिंध के हिन्दू बहुल क्षेत्रों को पाकिस्तान में न जाने देने की योजना बनाई। उन्होंने जगह-जगह पहुंचकर हिन्दुओं को संगठित होकर पंजाब व बंगाल के हिन्दू बहुल क्षेत्रों को भारत में ही रहने

की मांग उठाने की प्रेरणा दी। अगस्त के दूसरे सप्ताह में जैसे ही कलकत्ता में मुस्लिम लीग ने 'डायरेक्ट एक्शन' के नाम पर हिन्दुओं का संहार शुरू किया, हजारों मकानों को आग लगाई जाने लगी कि हिन्दु बंगालियों ने दंगाइयों का मुकाबला शुरू कर दिया। डॉ. मुखर्जी ने हिन्दुस्तान नेशनल गार्ड बनाकर पाकिस्तान समर्थक मुस्लिम नेशनल गार्ड के उत्पाती गुण्डों का मुकाबला कराया। वे स्वयं राष्ट्रभक्त युवकों को साथ लेकर उपद्रवग्रस्त क्षेत्रों में पहुंचे तथा आततायियों को खदेड़कर साहस और वीरता का परिचय दिया।

जहाँ कलकत्ता में मियाँ सुहरावर्दी तथा ख्वाजा नाजिमुद्दीन ने हिन्दुओं की हत्याएं कराईं, उनके घरों में आग लगवाई, वहीं नोआखाली में कुख्यात मुस्लिम लीगी गुलाम सरवर ने हिन्दुओं के विरुद्ध जेहाद का नारा लगाकर हिन्दुओं का सामूहिक संहार कराया। पूर्वी बंगाल के नगरों, कस्बों व गांवों में असंख्य हिन्दू युवतियों से दुराचार कर उनका अपहरण किया गया। नोआखाली में हुए अमानवीय अत्याचारों से तो एक प्रकार से मानवता ही कराह उठी।

गांधीजी को भी अत्याचारों का समाचार सुनकर नोआखाली जाना पड़ा। डॉ मुखर्जी भी नोआखाली पहुंचे तथा उन्होंने भारत सेवाश्रम संघ, आर्यसमाज और रामकृष्ण मिशन आदि के सहयोग से हिन्दुओं पर किये जा रहे अत्याचार रोकने का भरपूर प्रयास किया।

डॉ. मुखर्जी ने नोआखाली से लौटने के बाद समाचार पत्रों में हिन्दुओं के नरसंहार के षड़यंत्र का भण्डाफोड़ किया। उन्होंने पं. मदनमोहन मालवीयजी तथा धर्मसंघ के संस्थापक स्वामी करपात्रीजी महाराज से प्रार्थना की कि वे पूर्वी बंगाल में अपहृत की गयी हिन्दू युवतियों व बलात धर्मान्तरित किये गये हिन्दुओं को पुन: हिन्दू धर्म में दीक्षित किये जाने का धार्मिक निर्णय जारी करें।

मालवीयजी तथा स्वामी करपात्रीजी महाराज ने गीता प्रेस गोरखपुर की पत्रिका 'कल्याण' में अपना वक्तव्य जारी कर बलात मुसलमान बनाये गये हिन्दुओं को पुन: हिन्दू धर्म में ससम्मान लौट आने का निर्णय दिया।

मुखर्जी द्वारा प्रस्तुत नोआखाली तथा अन्य स्थानों पर हिन्दुओं के साथ अमानवीय व्यवहार किये जाने के रोमांचकारी समाचार प्रकाशित होते ही पूरे देश में तहलका मच गया।

'अमृत बाजार' पत्रिका ने लिखा-"बंगाल का गत दुर्भिक्ष उस समय के मिस्टर हर्बर्ट और सुहरावर्दी के सहयोग का फल था तो आज का यह पूर्व बंगाल का गुंडाराज गवर्नर बरोज और सुहरावर्दी की सम्मिलित और सहयोगितापूर्ण चेष्टाओं का परिणाम है! चर्चिल साहब का मिस्टर जिन्ना के साथ जैसा स्नेह संबंध है, उसका सबको पता है ही। इधर वायसराय महोदय भी अपने मुसलमान भक्तों का पूरा साथ दे रहे हैं।''

'सर्चलाइट' ने अपने २३ अक्टूबर के अंक में 'मनुष्यता को चुनौती' शीर्षक संपादकीय लेख में लिखा -

"पूर्व बंगाल आज मानवता को एक चुनौती है। आत्मसम्मान का भाव इतना नष्ट नहीं हो गया है कि चुपचाप हम एक दर्शक की तरह इस लोमहर्षक कांड को देखते रहें, क्योंकि ऐसी पशुता की मिसाल इतिहास में नहीं मिलती। बातूनी सरगर्मी बेकार है। कोरी मौखिक सहानुभूति निरर्थक है। मुस्लिम लीग ने हमारी स्त्रियों और बच्चों को नष्ट कर डालने का बीड़ा उठाया है। वह तलवार के बल पर इस्लाम का प्रचार चाहती है। हमारा धर्म और हमारी इज्जत खतरे में है। बंगाल का मंत्रिमंडल इन घटनाओं को दबाकर और घटाकर बतला रहा है, जैसे कुछ हुआ ही न हो, वस्तुस्थिति देखते हुए उसकी यह साफ बेईमानी है।''

प्रसिद्ध राष्ट्रीय पत्र 'प्रताप' (लाहौर) ने २२ अक्टूबर के संपादकीय लेख में लिखा-"बाद की खबरों से ज्ञात हुआ है कि नोआखाली और त्रिपुरा जिले के कुछ स्थानों में १० अक्टूबर से अब तक ५००० व्यक्ति मारे जा चुके हैं। ५०,००० हिन्दुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया गया है। इस नरमेध के सामने तो कलकत्ता कांड कुछ भी नहीं है। बंगाल में दंगों की खबरों पर सख्त सेंसर यानी रुकावट लगी हुई है। इस संबंध में वहाँ के समाचार पत्रों की स्वतंत्रता का वहाँ की मुस्लिम लीग ने गला घोंट दिया है। ऐसा प्रतीत होता है कि वहाँ की मुस्लिम गुंडाशाही वहाँ के तमाम

हिन्दुओं को समाप्त कर देने पर उतारू और आमादा है। आश्चर्य है कि इतने दिनों से वहाँ यह आततायीपन हो रहा है, पर बंगाल की सरकार उसे अब तक रोक नहीं सकी है। (रोकती कैसे, उसके कर्णधार वे ही हैं, जो स्वयं इस नरमेध के कर्णधार हैं) हमारा यकीन है कि जब तक बंगाल में मौजूदा सरकार कायम है, तब तक बंगाल से मुस्लिम गुंडाशाही रुक नहीं सकती। इस मौजूदा सरकार की पक्षपातपूर्ण नीति और अयोग्यता से वहाँ की मुस्लिम गुंडाशाही को शह मिल रही है। इस सरकार से सारे बंगाल के हिन्दुओं का जीवन खतरे में पड़ गया है। कोई भी सभ्य और न्यायशील सरकार एक क्षण के लिए भी ऐसी नृशंस और पाशविक दुर्घटनाओं को सहन नहीं कर सकती। पर हम देखते हैं कि कलकत्ता कांड के बाद बंगाल में एक से एक भीषण दुर्घटनाएं होती चली जा रही हैं, लेकिन बंगाल की मौजूदा सरकार उन्हें रोकने में कतई अयोग्य और असमर्थ है।''

'स्टेट्समैन' के नोआखली स्थित संवाददाता ने लिखा कि गुंडाशाही प्रारम्भ होने के १३वें दिन भी नोआखाली जिले के १२० गांव, त्रिपुरा जिले के ७० गांव सशस्त्र मुस्लिम गुंडों से घिरे हुए हैं। इस घेरे में फंसे हुए एक लाख से अधिक हिन्दू स्त्री-पुरुषों के प्राण संकट में हैं। आपत्ति में फंसे हुए अधिकांश लोगों को कई दिनों से भोजन नहीं मिला है और अगर फौज रसद की सहायता के साथ शीघ्र घेरे को तोड़कर उनके पास नहीं पहुंच जाती, तो वे जीवित नहीं बच सकते। उपद्रवकारी लोग कसाइयों की तरह हिन्दुओं को मारकर या तो जला देते हैं या नहर में फेंक देते हैं, ताकि उनका पता न लगे और किसी तरह शिनाख्त न की जा सके।

आचार्य कृपलानी के उद्गार

तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष आचार्य जेबी कृपलानी भी नोआखाली पहुंचे थे। उन्होंने पत्रकारों से कहा-"हमको शरणार्थियों ने यह बताया कि हमले अत्यंत संगठित रीति से किये गये हैं। गुंडों में अवकाश प्राप्त सरकारी कर्मचारी भी थे। उन लोगों ने सैनिक ढंग से आक्रमण किया। गुंडे पहले अपने कुछ साथियों को गांवों में भेजते थे, जो उन्हें आवश्यक सूचनाएं देते

थे। वे लोग सड़कें काटने और पुल तोड़ने आदि में भी निपुण थे। उपद्रव के पूर्व ही एक भूतपूर्व एम.एल.ए. भी मुसलमानों को भड़काने के लिए बाकायदा प्रचार करते थे। हमें विश्वास है कि सरकार को उस आदमी की हरकतों का पता था।''

महामना मालवीय जी का आह्वान

महान स्वाधीनता सेनानी तथा कांग्रेस के वरिष्ठ नेता महामना पं. मदनमोहन मालवीय जी ने 'कल्याण' पत्रिका को दिये अपने संदेश में कहा-"मैं अनुभव करता हूं कि मानवता संकट में है। हिन्दू संस्कृति और धर्म भी खतरे में है। आज एक असाधारण वस्तुस्थिति उत्पन्न हो गयी है। हिन्दुओं को चाहिए कि सर्वसाधन संपन्न होकर संगठित हो जाएं और अपनी रक्षा की समुचित व्यवस्था कर लें। क्योंकि हिन्दू जी-जान से अथक प्रयास करते रहे कि सच्ची हिन्दू-मुस्लिम एकता कायम हो। वे सहयोग भी करते रहे और सहिष्णु भी बने रहे, किन्तु मुझे इस बात का दुःख है कि अधिकांश मुसलमानों ने सहिष्णुता का अर्थ हिन्दुओं की कमजोरी समझा। वे हिन्दुओं से सहयोग भी करना नहीं चाहते। उन लोगों के प्रति हम दया नहीं दिखा सकते, जो हिन्दुओं को शांतिपूर्वक रहने नहीं देना चाहते। यदि हिन्दू संगठित नहीं हुए तो वे अब बच नहीं सकते। मैं यह वक्तव्य कोई अशांत चित्त से नहीं अपितु सोचकर दे रहा हूं।

मातृभूमि, धर्म, संस्कृति और अपने हिन्दू भाइयों के प्रति भी हिन्दू नेताओं को अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए। यह परम आवश्यक हो गया है कि हिन्दू संगठित होकर जातियों का भेदभाव और अंतर भुलाकर एकताबद्ध हो जाएं, ताकि हिन्दुओं का अस्तित्व तथा उनकी संस्कृति और आदर्श अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए हम भरपूर उद्योग कर सकें।

मुस्लिम नेताओं के विषैले भाषण, अज्ञात मुस्लिम संस्थाओं द्वारा तैयार किये गये गुप्त कागजात, मुस्लिम लीग के राजनीतिक व्यवहार, कलकत्ते में नरमेध तथा पूर्वी बंगाल की भीषण अराजकता आदि घटनाओं से किस हिन्दू का हृदय क्रोधाग्नि से प्रज्ज्वलित हो, हिन्दू जाति की रक्षा के लिए कुछ कर डालने को फड़क नहीं उठेगा? यदि हिन्दू जाति जीवित रहना

चाहती है तो वह अपना कर्तव्य समझे। दशकों से हिन्दुओं के विचार धार्मिक की अपेक्षा राष्ट्रीय रहे हैं। उनका अहिंसा में विश्वास और सत्य में प्रेम रहा है। एक ही राष्ट्र के दो भाइयों से झगड़ा करना नहीं चाहते। पर मुसलमानों ने हिन्दुओं की इस भावना से अनुचित लाभ उठाया है।

उन्होंने कहा-''हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष की जड़ झूठा प्रचार है और इस प्रचार में मुसलमान सफल रहे हैं। हिन्दू वर्षों से सताए जा रहे हैं। राष्ट्रवादी संस्था कांग्रेस और सांप्रदायिक संस्था मुस्लिम लीग दोनों को समान अधिकार दिये गये हैं और इस प्रकार बहुसंख्यक समुदाय के अधिकार कुचले गये हैं। हिन्दुओं की आकांक्षाएं, संस्कृति और धर्म धूल में मिलाए जा रहे हैं। हिन्दुओं तथा अन्यान्य समुदाय की राजनीतिक भलाई कांग्रेस के हाथ में भले ही सुरक्षित समझी जाए, किन्तु जो समस्या विशुद्ध साम्प्रदायिक है, जो प्रश्न हिन्दुओं के धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक हितों से संबंध रखते हैं, उन पर अंतिम निर्णय हिंदू संस्था ही दे सकती है। धर्म परिवर्तन रोका ही जाना चाहिए। विधर्मी बनाये गये हिन्दुओं को पुन: हिन्दू बनाये जाने के लिए तो सुविधा मिले ही, साथ ही उन मुसलमानों को भी सुविधाएं मिले जो हिन्दू बनना चाहते हैं।''

पोद्दार जी की पुस्तक से खलबली मची

स्वाधीनता संग्राम में भाग लेकर वर्षों तक जेल की यातनाएं सहने वाले, गीता प्रेस गोरखपुर के संस्थापक तथा 'कल्याण' पत्रिका के संपादक भाई हनुमानप्रसाद पोद्दार जी ने महामना पं. मदनमोहन मालवीय जी की प्रेरणा पर सन् १९४६ में 'हिन्दू क्या करें?' पुस्तिका प्रकाशित कर पूर्वी बंगाल के अत्याचारों का ब्यौरा देते हुए लिखा:-

'मुस्लिम लीग के 'डायरेक्ट ऐक्शन' के दिन होनेवाले पूर्व नियोजित कलकत्ते के भयानक नरसंहार और पैशाचिक अत्याचार, मुसलमान नेताओं की दूषित मनोवृत्ति और पूर्वी बंगाल के ढाका आदि स्थानों में होने वाले अनाचारों को कुछ लोग पढ़-सुन सके हैं। तबसे कलकत्ता, ढाका, चटगांव आदि स्थानों में छुरे भोंके जाने, एसिड फेंक कर जलाए जाने आदि की कुप्रक्रियाएं चल रही हैं। पूर्व बंगाल में जिस अत्याचार का

आरम्भ हुआ था वह इधर बहुत बढ़ गया। गत १० अक्टूबर से अब तक नोआखाली, कुमिल्ला और त्रिपुरा जिले में लगभग १६०० वर्ग मील भूमि के सैकड़ों गांव इस भयानक अत्याचार के शिकार हो चुके हैं। कहते हैं कि लगभग चार लाख नर-नारियों पर इसका प्रभाव पड़ा है। इस छोर से उस छोर तक गांव के गांव जला दिये गये, हजारों की संख्या में नर-नारी, आबाल वृद्धों की निर्मम हत्याएं की जा चुकी हैं, उनके घरों का माल असबाब लूटा जा चुका है, असंख्य स्त्रियों का अपहरण और सतीत्व नष्ट किया जा चुका है, अगणित बालिकाओं से बलपूर्वक विवाह कर लिया गया है। धर्म स्थल और देव मंदिर नष्ट-भ्रष्ट किये जा चुके हैं, जीवित पुरुषों को बांध-बांधकर जला दिया गया है और हजारों नर-नारी जबर्दस्ती मुसलमान बना लिये गये हैं। आचार्य कृपलानी जी के साथ जानेवाले पत्रकार श्री पुरुषोत्तमदास टंडन के सामने एक शरणार्थी ने कराहते हुए बतलाया कि आततायियों ने भाइयों के सामने बहिनों से और पुत्रों के सामने माताओं से बलात्कार किये! फिर जबर्दस्ती पकड़-पकड़ कर उनसे एक-दूसरे के मुंह में पेशाब करवाया गया! उन्हें जमीन पर डाल दिया गया, उत्सव मनाकर छुरे भोंके गये, उनके खून से आततायियों ने अपने हाथ रंगे और उसी खून से महिलाओं के मुंह को रंग कर पुन: बलात्कार किया!!''

आदर्श वीरता

नोआखाली हिन्दू महासभा और वहाँ की बार एसोशियेसन के सभापति श्री राजेन्द्रलाल राय का घर घेर लिया गया। उनके कुटुम्ब में पुरुष-स्त्री मिलकर लगभग सौ आदमी थे। उन पर आततायियों ने हमला किया। पेट्रोल छिड़क कर घर में आग लगा दी गयी। तब घर के सब लोगों ने निश्चय किया कि घर के अंदर रहकर जल मरने की अपेक्षा बाहर निकल कर मुकाबला करते हुए मरना कहीं श्रेष्ठकर है और सभी स्त्री-पुरुष, बालक-वृद्ध, युवक बाहर निकल पड़े तथा आततायियों का सामना करने लगे। वे बड़ी बहादुरी से लड़े और सबसे अधिक आश्चर्य तो इस बात का है कि पुरुषों से भी अधिक वीरता से स्त्रियां लड़ीं। वे बराबर आततायियों

पर वार करती रहीं। पर अंत में आततायियों की संख्या बहुत बढ़ जाने पर दो दिन के बाद उन्हें वीरगति प्राप्त हुई। कुछ आदमी बचे जो इधर-उधर निकल गये, पता नहीं अब वे किस स्थिति में हैं। ऐसी कुछ घटनाओं के और भी उदाहरण मिले हैं।

श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार लिखित 'हिन्दू क्या करें?' पुस्तिका में प्रकाशित तथ्यपूर्ण विवरणों को प्रस्तुत कर डॉ. मुखर्जी ने सरकार से प्रश्न किया कि वह इन तमाम तथ्यों को देखते हुए पूर्वी बंगाल में किये गये हिन्दुओं के संहार तथा उत्पीड़न की जांच कराकर आततायियों को दंडित करने की पहल करे।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक महामना पं. मदनमोहन मालवीय जी को नोआखाली, त्रिपुरा, चटगांव आदि में हिन्दू ललनाओं के साथ अमानवीय अत्याचार किये जाने की जानकारी मिलते ही भीषण आघात लगा। उनका हृदय विदीर्ण हो उठा तथा वे गोलोकवासी हो गये। पोद्दार जी ने कल्याण का महामना श्रद्धांजलि अंक प्रकाशित किया, जिसे संयुक्त प्रांत की कांग्रेस सरकार ने जब्त कर लिया। डॉ. मुखर्जी ने इसकी कड़ी आलोचना की।

बंगाल व पंजाब के महत्वपूर्ण भाग बचाने का अभियान

डॉ. मुखर्जी ने सोचा कि भले ही वह भारत का विभाजन रोकने में सफल न हुए हों, किन्तु पाकिस्तान का अंग बनाये जाने वाले बंगाल, पंजाब व असम का विभाजन कराकर इन राज्यों के हिन्दू बहुल क्षेत्रों को 'पाकिस्तान' के चंगुल के निकालने में सफल हो सकते हैं।

उन्होंने जगह-जगह हिन्दू सम्मेलन आयोजित कर पश्चिम बंगाल के कलकत्ता आदि क्षेत्रों तथा पंजाब के अमृतसर, जालंधर आदि अन्य क्षेत्रों को हिन्दू बहुलता के आधार पर भारत का अंग बनाये रखने की मांग शुरू करा दी।

मार्च १९४७ में बंगाल के हिन्दू प्रतिनिधियों के सम्मेलन में सर्व सम्मत प्रस्ताव किया गया कि बंगाल के हिन्दू बहुल क्षेत्रों को पाकिस्तान में कदापि नहीं जाने दिया जाए। बंगाल का विभाजन अनिवार्य है। हिन्दू बहुल बंगाल

के क्षेत्रों को मिलाकर एक अलग प्रांत की रचना की जानी चाहिए।

कांग्रेस के कतिपय नेताओं ने डॉ. मुखर्जी के बंगाल में बढ़ते प्रभाव से चिढ़कर आरोप लगाया कि डॉ. मुखर्जी के बंगाल के हिन्दू बहुल क्षेत्रों को मिलाकर नये प्रांत के निर्माण के सुझाव से पाकिस्तान को लाभ पहुंचेगा।

कलकत्ता तथा बंगाल के अन्य हिन्दू बहुल क्षेत्रों के हिन्दू पाकिस्तान में किसी भी हालत में न मिलने के प्रश्न पर एकजुट होते जा रहे थे। डॉ. मुखर्जी ने १९ मार्च को एक वक्तव्य में कहा-"यदि ब्रिटिश सरकार, मुस्लिम लीग तथा कांग्रेस ने षड़यंत्र रचकर बंगाल को भारत से अलग करने का प्रयास किया तो हम बड़े से बड़ा बलिदान देकर पूर्वी पाकिस्तान के एक भाग को भारत का अविभाज्य अंग बनाने को कृतसंकल्प रहेंगे।''

डॉ. मुखर्जी ने स्पष्ट कहा कि यह दुष्प्रचार निराधार है कि मेरे बंगाल के विभाजन के सुझाव से पाकिस्तान को लाभ पहुंचेगा। हम भारत विभाजन के पूर्णत: विरोधी हैं किन्तु यदि भारत विभाजन होना ही है तो पूरा बंगाल आंखें बंद कर पाकिस्तान को दे देना बंगाल के हिन्दू बहुल क्षेत्र के लोगों के साथ घोर अन्याय होगा।

बंगाल के नोआखाली, चटगांव, ढाका आदि क्षेत्रों में मुस्लिम लीग के आह्वान पर हिन्दुओं पर जुल्म ढाने शुरू कर दिये गये थे। गुण्डे सरेआम हिन्दुओं की हत्याएं कर रहे थे, हिन्दू युवतियों का अपहरण कर उनका उत्पीड़न किया जा रहा था। उन्हें नग्न कर जुलूस निकाले जा रहे थे।

इन घटनाओं ने पाकिस्तान के नाम पर इस्लामिस्तान बनाने वालों की विकृत मानसिकता से पूरे देश को परिचित करा दिया। कलकत्ता आदि हिन्दू बहुल क्षेत्रों के बंगाली भी मुस्लिम लीग के डायरेक्ट एक्शन के दौरान इस्लामी दरिन्दगी के नमूने देख चुके थे। अत: बंगाल को विभाजित कर एक भाग भारत में रखे जाने के समर्थन में वातावरण बनने लगा।

डॉ. मुखर्जी के प्रस्ताव के बढ़ते समर्थन से घबड़ाकर मुस्लिम लीग के नेता मियाँ एच. एस. सुहरावर्दी ने संयुक्त स्वतंत्र बंगाल राज्य बनाये जाने का प्रस्ताव रखा। सुहरावर्दी चाहते थे कि सभी बंगालियों को स्वतंत्र बंगाल का झांसा देकर उन्हें प्रांतीयता की भावना में फंसा लिया जाए। डॉ. मुखर्जी

जानते थे कि संयुक्त स्वतंत्र बंगाल को आगे चलकर कभी भी पाकिस्तान का अंग बनाया जा सकता है।

डॉ. मुखर्जी ने १३ मई को गांधीजी से भेंट कर सख्त चेतावनी दी-"कांग्रेस को सुहरावर्दी के संयुक्त स्वतंत्र बंगाल के धूर्तताभरे झांसे में नहीं आना चाहिए।" उन्होंने स्पष्ट कहा कि बंगाल के हिन्दू बहुल क्षेत्र के लोग किसी भी स्थिति में मजहबी उन्मादी मुसलमानों के दिमाग की उपज पाकिस्तान का अंग बनने को कदापि तैयार नहीं होंगे।

अन्ततः बंगाल और पंजाब के हिन्दू बहुल क्षेत्रों को पाकिस्तान में न मिलाए जाने की घोषणा करनी पड़ी।

डॉ. मुखर्जी भले ही भारत विभाजन की त्रासदी को रोक पाने में सफल नहीं हुए, किन्तु वे बंगाल और पंजाब को विभाजित कर दोनों राज्यों के क्षेत्रों को भारत में बनाये रखने में अवश्य सफल हो गये।

केंद्रीय मंत्रिमंडल में

स्वाधीन भारत का पहला केंद्रीय मंत्रिमंडल सन् १९४७ में बनाया गया। सरदार पटेल तथा कुछ अन्य वरिष्ठ कांग्रेसी नेताओं का मत था कि इस पहले मंत्रिमंडल को राष्ट्रीय स्वरूप देने के लिए कांग्रेस से अलग दलों के कुछ राष्ट्रीय व अनुभवी नेताओं को भी शामिल किया जाए।

डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी, डॉ. भीमराव अंबेडकर तथा श्री जान मथाई इन तीन गैर कांग्रेसी नेताओं को केंद्रीय मंत्रिमंडल में शामिल होने का निमंत्रण मिला। उन्होंने अपने प्रेरणास्रोत वीर सावरकर जी से विचार-विमर्श किया। सावरकर जी ने कहा-"आप मंत्रिमंडल में रहकर हिन्दू हितों के लिए कार्य कर सकेंगे। इसलिए इस स्वर्णिम अवसर का लाभ उठाना चाहिए।"

डॉ. मुखर्जी नेहरू सरकार में केंद्रीय उद्योग मंत्री मनोनीत किये गये। उन्होंने स्वाधीन भारत के औद्योगिक विकास के लिए क्रांतिकारी व गतिशील योजना बनाई। वे चाहते थे कि कृषि प्रधान भारत, जिसे अंग्रेजों ने अपने शासनकाल में उद्योगों से, कारखानों से वंचित रखकर प्रत्येक वस्तु के लिए ब्रिटेन पर निर्भर रखा, अब स्वाधीन होने के बाद औद्योगिक क्षेत्र में अपना ऊंचा स्थान बनाए। आवश्यक उपभोग की वस्तुओं के निर्माण के साथ-साथ उन्होंने देश की रक्षा में महत्वपूर्ण समझी जानेवाली सैन्य सामग्री के निर्माण के लिए भी कारखाने लगाये जाने की आवश्यकता अनुभव की।

उन्होंने जहाँ सिन्दरी में खाद (फर्टीलाइजर) कारखाना स्थापित कराया, वहीं बेंगलूर में हिन्दुस्तान एयर क्राफ्ट फैक्ट्री की स्थापना करायी। रेल के इंजन तथा डिब्बे बनाने के लिए चितरंजन लोकोमोटिव फैक्ट्री भी डॉ. मुखर्जी के प्रयासों की ही देन है। उनका सपना था कि भारत अपनी अखण्डता की रक्षा के लिए प्रतिरक्षा संबंधी सैन्य सामग्री के निर्माण में पूर्ण आत्मनिर्भर बन जाए। भारतीयों के उपयोग के लिए कपड़ा ब्रिटेन से

मंगवाया जाता था। उन्होंने कपड़ा कारखानों का जाल बिछाने की योजना को मूर्त रूप दिया।

श्रीनगर पर पाकिस्तानी आक्रमण

धर्म के आधार पर भारत विभाजन कर पाकिस्तान बना दिये जाने के बावजूद मुस्लिम लीग तथा अन्य मजहबी जुनूनी भारत के विरुद्ध कोई न कोई षड़यंत्र रचने में लगे हुए थे। पाकिस्तान ने कश्मीर को बलपूर्वक अपने अधीन बनाने की कुत्सित योजना पर अमल करना शुरू कर दिया। २२ अक्टूबर १९४७ को पांकिस्तान ने नृशंसता के लिए विख्यात कबाइलियों को शस्त्रास्त्र देकर अपने सैन्य अधिकारियों के नेतृत्व में श्रीनगर पर आक्रमण कर दिया।

प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू अचानक किये गये इस आक्रमण का प्रतिकार करने के लिए भारतीय सेना श्रीनगर भेजे जाने से हिचक रहे थे। उन्हें आशंका थी कि कहीं सेना भेजने से सीधे पाकिस्तान से युद्ध न करना पड़ जाए।

गृहमंत्री सरदार पटेल चाहते थे कि भारतीय सेना के प्रशिक्षित जवानों व अधिकारियों को कबाइलियों के आक्रमण का मुंहतोड़ जवाब देने के लिए अविलंब भेजा जाना चाहिए। डॉ. मुखर्जी सरदार पटेल से मिले और कहा–"बिना विलंब किये श्रीनगर की रक्षा के लिए सेना भेजे जाने में ही राष्ट्र का हित है। यदि एक बार कबाइलियों ने वहाँ अधिकार जमा लिया तो फिर ब्रिटेन कश्मीर को पाकिस्तान में मिलाने के लिए दबाव बना सकता है।

सरदार पटेल नेहरू जी से स्वीकृति लेने में सफल हुए तथा भारतीय सेना की टुकड़ियां तुरन्त विशेष वायुयानों द्वारा श्रीनगर भेजी गयीं। उन्होंने अपने अद्‌भुत पराक्रम के बलबूते पर पाकिस्तानी कबाइलियों की योजना को धूल में मिला दिया।

उन्हीं दिनों हैदराबाद के निजाम ने पाकिस्तान की कठपुतली बनकर भारत सरकार को आँखें दिखानी शुरू कर दीं। डॉ. मुखर्जी निजाम के

कट्टर मजहबी चेहरे व कार्यकलापों से पहले से ही परिचित थे। सन् १९३८ में निजाम ने हिन्दू जनता पर भीषण अत्याचार कराये थे। खुलना (बंगाल) में हुए हिन्दू सम्मेलन में वीर सावरकर तथा डॉ. मुखर्जी की उपस्थिति में हिन्दू महासभा ने हैदराबाद के निजाम के विरुद्ध आर्यसमाज द्वारा चलाए गये आंदोलन में पूर्ण सहयोग का प्रस्ताव पारित किया गया था। हैदराबाद का निजाम ब्रिटिश नेताओं से सांठगांठ कर मुस्लिम बहुल राज्य बताकर हैदराबाद को भारत से अलग करने का षड़यंत्र रचने लगा। सरदार पटेल भारत के विभिन्न राज्यों के राजाओं से भारत में विलय के कागजातों पर हस्ताक्षर करा रहे थे। निजाम ने भारत में विलय करने के प्रस्ताव को अस्वीकार कर चुनौती दे डाली। निजाम के संकेत पर हैदराबाद को हिन्दू विहीन करने के लिए खूंखार रजाकारों ने हिन्दुओं को आतंकित करना शुरू कर दिया।

निजाम ने ब्रिटिश संवैधानिक परमर्शदाता सर वॉल्टर मॉक्टन को लिखे पत्र में मत व्यक्त कर दिया था कि वह हैदराबाद को स्वतंत्र मुस्लिम राज्य बनाकर उसका सुल्तान बनना चाहता है।

गृहमंत्री सरदार पटेल रामझ रहे थे कि यदि ब्रिटिश सहयोग से भारत में एक नया मुस्लिम राज्य बन गया तो यह देश की अखण्डता के लिए भीषण खतरा सिद्ध होगा। नेहरूजी निजाम के विरुद्ध कड़े कदम उठाये जाने के विरोधी थे। नेहरू जी की इस नीति के कारण निजाम के नखरे बढ़ने लगे। उसने गुप्त रूप से शस्त्रास्त्र इकट्ठे करने शुरू कर दिये।

डॉ. मुखर्जी ने पहल की

डॉ. मुखर्जी ने सरदार पटेल से हैदराबाद के इस खतरे के विषय में बातचीत की। एक दिन मंत्रिमंडल की बैठक में हैदराबाद की विषम बनती जा रही समस्या पर चर्चा हुई। डॉ. मुखर्जी ने सुझाव दिया कि प्रधानमंत्री नेहरू जी अत्यंत व्यस्त रहते हैं अत: हैदराबाद की समस्या के निदान का दायित्व सरदार पटेल को सौंपा जाना चाहिए। मंत्रिमंडल ने आनन-फानन में मुखर्जी के सुझाव को मंजूरी दे दी।

सरदार पटेल ने ठीक समय पर हैदराबाद की समस्या को पुलिस एक्शन के माध्यम से हल कर निजाम को भारत माता के चरणों में झुकने को बाध्य कर दिया। कासिम रिजवी तथा उसके रजाकार आततायियों का देखते ही दमन कर दिया गया। निजाम ने भारत में विलय के लिए घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये।

वीर सावरकर ने उस समय कहा था-'हैदराबाद की जटिल समस्या के निदान का श्रेय जहाँ सरदार पटेल को है, वहीं डॉ. मुखर्जी ने भी इस राष्ट्रीय कार्य में अपनी अहम भूमिका निभाई।''

शेख अब्दुल्ला का विरोध

शेख अब्दुल्ला ने कश्मीर का सुल्तान बनने के ख्वाब को पूरा करने के लिए मनमानी शुरू कर दी थी। वहाँ के हिन्दुओं पर अत्याचार ढाये जाने लगे। राष्ट्रवादी विचारधारा के लोगों ने प्रजा परिषद का गठन कर शेख अब्दुल्ला की कारस्तानियों का विरोध करना शुरू कर दिया था। कश्मीर में लोकप्रिय राष्ट्रवादी नेता पं. प्रेमनाथ डोगरा प्रजा परिषद के अध्यक्ष तथा राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के जम्मू-कश्मीर के प्रचारक श्री बलराज मधोक महामंत्री थे।

श्री बलराज मधोक उन राष्ट्रभक्त युवाओं में थे, जिन्होंने पाकिस्तानी कबाइलियों के कश्मीर पर किये गये आक्रमण के दौरान संघ के समर्पित कार्यकर्ताओं के साथ जान हथेली पर रखकर श्रीनगर की रक्षा में अनूठा योगदान दिया था।

श्री बलराज मधोक प्रजा परिषद के महामंत्री के नाते फरवरी १९४८ में सरदार पटेल को शेख अब्दुल्ला की राष्ट्रविरोधी साजिश से अवगत कराने के लिए दिल्ली आये। उन्होंने ८ मार्च को डॉ. मुखर्जी से भेंट कर उन्हें कश्मीर में चल रहे षड़यंत्र की जानकारी दी। मुखर्जी ने कहा कि वे शेख के मंसूबों से सुपरिचित हैं, किन्तु नेहरूजी का उन्हें संरक्षण प्राप्त है। श्री मधोक १० मार्च को नेहरू जी से मिले, किन्तु नेहरू जी शेख के विरुद्ध कुछ सुनने को तैयार नहीं हुए। शेख के कानों तक यह

समाचार पहुंच गया कि प्रजा परिषद की ओर से श्री मधोक उसकी कारस्तानियों की शिकायत पहुंचाने के लिए दिल्ली गये हुए हैं। शेख अब्दुल्ला ने श्री मधोक को जम्मू-कश्मीर से निष्कासित करने का आदेश जारी करा दिया। इतना ही नहीं शेख सरकार ने श्री मधोक के वृद्ध माता-पिता को परिवार सहित जम्मू-कश्मीर से निष्कासित करा डाला।

श्री मधोक ने जब डॉ. मुखर्जी से पुन: भेंट कर उन्हें बताया कि शेख अब्दुल्ला ने राष्ट्रवादी तत्वों का दमन शुरू कर दिया है, तो उन्हें बहुत दु:ख हुआ। उन्होंने कहा कि आप पूरे उत्साह से शेख के षड़यंत्र का पर्दाफाश करते रहें। समय आने पर सब ठीक हो जाएगा।

पाकिस्तान कश्मीर पर कबाइलियों से अप्रत्यक्ष आक्रमण करा चुका था। पूर्वी बंगाल तथा पश्चिमी पंजाब में अल्पसंख्यक हिन्दुओं का संहार तथा धर्मपरिवर्तन जारी था। इसके बावजूद प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू पाकिस्तान को तुष्ट करने में नहीं हिचक रहे थे। उन्होंने कश्मीर में जनमत संग्रह कराने का आश्वासन देकर कश्मीर के प्रश्न पर भीषण समस्या को जन्म दे दिया था।

पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यक हिन्दुओं की रक्षा का आश्वासन देने के बावजूद पाकिस्तान सरकार हिन्दुओं के उत्पीड़न व धर्मपरिवर्तन के कार्य में लगी हुई थी। हिन्दुओं की चल-अचल संपत्ति, कारखाने, दुकानें जब्त की जाने लगी थीं। जो हिन्दू धर्म परिवर्तन कर मुसलमान बनने को तैयार नहीं होते थे, उन्हें आतंकित कर भारत की ओर धकेला जा रहा था। पश्चिमी पाकिस्तान के पंजाब, सिंध आदि क्षेत्रों में लाखों हिन्दुओं की या तो हत्या करा दी गयी थी, अथवा उन्हें मुसलमान बना लिया गया था।

१९४८ में कलकत्ता में प्रथम भारत पाक समझौते के बावजूद पाकिस्तान अल्पसंख्यक हिन्दुओं पर अत्याचार ढाने से बाज नहीं आ रहा था। पूर्वी बंगाल के लगभग २० लाख हिन्दुओं को प्राण व धर्म बचाने के लिए भारत आने के लिए विवश होना पड़ा था। पाकिस्तान की हिन्दू विनाश नीति के बावजूद नेहरूजी ने पाकिस्तान के प्रधानमंत्री लियाकतअली के साथ समझौता करने में हिचकिचाहट नहीं की। डॉ.

मुखर्जी ने मंत्रिमंडल में रहते हुए भी इस समझौते के घातक परिणामों से सबको अवगत कराया।

डॉ. मुखर्जी की आत्मा ने उन्हें कचोटा कि जिस सरकार में वह मंत्री हैं, वह भारत सरकार लियाकतअली से समझौता कर पाकिस्तान के अल्पसंख्यक हिन्दुओं को मृत्यु के मुख में धकेल रही है। क्या इस घोर पाप में उनको सहयोगी नहीं माना जाएगा? अंतरात्मा की इस आवाज पर ८ मार्च १९५० को डॉ. मुखर्जी ने मंत्रिमंडल से त्यागपत्र दे दिया।

संसद में गर्जना

डॉ. मुखर्जी ने मंत्रिमंडल से त्यागपत्र देने के बाद १९ अप्रैल १९५० को संसद में अपने वक्तव्य में निर्भीकता के साथ कहा-

"जब भारत का विभाजन अपरिहार्य हो गया तो मैंने बंग विभाजन के पक्ष में जनमत बनाने का प्रयास किया। मुझे आशंका थी कि अगर बंगाल का विभाजन नहीं हुआ तो पूरा बंगाल संभवत: असम भी पाकिस्तान का हिस्सा बना दिया जाएगा।

उस समय इस बात से अनभिज्ञ होते हुए भी कि मैं आगे चलकर प्रथम केंद्रीय मंत्रिमंडल में शामिल हो सकता हूँ, दूसरों के साथ मैंने भी पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं को आश्वासन दिया था कि "यदि वे भावी पाकिस्तानी सरकार के हाथों यातनाओं का शिकार बने, यदि उनके जीवन और संपत्ति को खतरा हो, तो स्वतंत्र भारत एक अकर्मण्य दर्शक की भांति देखता ही नहीं रहेगा अपितु भारत सरकार तथा भारतीय जनता उनके न्यायोचित हितों की रक्षा के लिए कटिबद्ध रहेगी।''

डॉ. मुखर्जी ने पूर्वी बंगाल तथा पंजाब के हिन्दुओं के संहार, उत्पीड़न, धर्मान्तरण आदि के आंकड़े प्रस्तुत करने के बाद कहा-"हम यह न भूलें कि पूर्वी बंगाल के हिन्दू केवल मानवता के नाते ही भारतीय संरक्षण के अधिकारी नहीं हैं, अपितु सहर्ष स्वीकार की हुई उन यातनाओं और त्याग के कारण भी हैं, जिनको उन्होंने अपने क्षुद्र संकीर्ण स्वार्थ के लिए नहीं, अपितु समस्त भारत की राजनीतिक स्वाधीनता और बौद्धिक विकास के लिए सहन किया था। यह उन बलिदानी नेताओं और युवा शक्ति की सम्मिलित आवाज है, जो भारत के नाम पर हंसते-हंसते फांसी पर झूल गये। यह आवाज आज स्वाधीन भारत की ओर न्याय की आशा रखती है।''

डॉ. मुखर्जी के इन शब्दों को सुनकर संसद के अनेक सदस्यों की आंखों

से अश्रुकण ढुलक पड़े थे। अनेक सांसदों ने भाषण के बाद उन्हें अनूठी कर्तव्यपरायणता व मंत्री पद ठुकराने पर हार्दिक बधाई दी थी।

प्रकाशवीर शास्त्री भी रो पड़े

एक बार प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने संसद में वक्तव्य दिया कि भारत द्वारा लियाकतअली से किये गये समझौते का यह परिणाम निकला कि पूर्वी बंगाल से निष्कासित हजारों शरणार्थी फिर से अपने घरों को लौट आये हैं। उसी दिन प्रखर आर्यसमाजी नेता प्रकाशवीर शास्त्री आर्य जगत के प्रतिष्ठित संन्यासी स्वामी अभेदानंद जी महाराज (पटना) के साथ दिल्ली में डॉ. मुखर्जी से मिलने पहुंचे। स्वामीजी ने कहा-"डॉक्टर साहब! आज के समाचार पत्र में नेहरूजी का वक्तव्य छपा है कि लियाकतअली से समझौते के बाद हजारों हिन्दू पूर्वी पाकिस्तान के अपने घरों को लौटने लगे हैं? क्या यह सत्य है?"

यह सुनते ही डॉ. मुखर्जी की आंखों से आंसू ढुलक पड़े। वे बोले-"स्वामी जी, ठीक है कुछ हिन्दू लौट गये हैं, परन्तु कौन हिन्दू लौटे हैं, जरा यह भी तो सुनिये। जिन्हें कलकत्ता के फुटपाथों पर पड़े-पड़े महीनों हो गये, पेट भरने को रोटी नहीं मिली, वे बेचारे बेबस हिन्दू मजबूरी में लौट गये हैं। उन्होंने सोचा, चलो जब मरना ही है, तो पूर्वजों की भूमि में चलकर मरेंगे। सो स्वामी जी ये हजारों हिन्दू परिवार नेहरू-लियाकत समझौते से अपने घरों को नहीं गये, वे हमने इस्लाम की भट्टी में झोंक दिये हैं।"

यों कहकर उस तपस्वी का हृदय अपनी बंगभूमि की दुर्दशा का ध्यान कर रो उठा और रूमाल से वह आंसू पोंछने लगे। शास्त्री जी भी रो पड़े।

भारतीय जनसंघ की स्थापना

डॉ. मुखर्जी ने चिंतन किया कि जब तक संसद में केंद्र सरकार तथा कांग्रेस की गलत नीतियों के विरुद्ध मुखर स्वर गुंजानेवाला शक्तिशाली विपक्ष नहीं होगा, सरकार मनमानी करती रहेगी।

३० जनवरी १९४८ को गांधी जी की हत्या के बाद देश की राजनीतिक स्थिति में तेजी से परिवर्तन आने लगा था। हिन्दू महासभा के शीर्षस्थ नेता वीर सावरकर जी को गांधी जी की हत्या के षड़यंत्र में गिरफ्तार किया गया था। हिन्दू महासभा तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नेताओं पर हत्या के षड़यंत्र में शामिल होने का आरोप लगाकर प्रतिबंध लगा दिया गया था।

डॉ. मुखर्जी राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के हिन्दू संगठन के उद्देश्य से पूर्ण सहानुभूति रखते ही थे। उन्होंने हिन्दू महासभा तथा संघ को गांधी जी की हत्या के षड़यंत्र में लपेटे जाने की भी तीव्र भर्त्सना की। संघ ने प्रतिबंध के विरुद्ध जोरदार सत्याग्रह किया। अंत में सरकार को उस पर से प्रतिबंध हटाने के लिए बाध्य होना पड़ा।

संघ के शीर्षस्थ नेताओं ने विचार-विमर्श के बाद निष्कर्ष निकाला कि जब तक देश में हिन्दुत्व के प्रति निष्ठावान विचारधारा के लोगों का राजनीतिक संगठन नहीं बनेगा, तब तक संसद में या उससे बाहर आवाज उठाना असंभव ही होगा।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक श्री मा.स. गोलवलकर (गुरु जी) से डॉ. मुखर्जी ने भेंट की। अंत में १६ जनवरी १९५१ को दिल्ली में एक बैठक का आयोजन किया, जिसमें राजधानी दिल्ली के प्रमुख समा. जसेवी व संघ नेता लाला हंसराज गुप्ता, वैद्य गुरुदत्त, वसंतराव ओक, डॉ. भाई महावीर, प्रो. धर्मवीर, आर्यसमाजी नेता महाशय कृष्ण, प्रो. बलराज मधोक तथा लाला बलराज भल्ला शामिल थे। डॉ. मुखर्जी को मार्गदर्शन

के लिए इस बैठक में सादर आमंत्रित किया गया।

डॉ. मुखर्जी ने बैठक में कहा कि वस्तुत: जब तक राष्ट्रीय विचार धारा के गैर कांग्रेसी तथा गैर कम्युनिस्ट राजनीतिक लोग एक अखिल भारतीय दल का गठन नहीं करेंगे अपनी विचारधारा को मूर्त रूप देना संभव नहीं होगा। इसी पहली बैठक में भारतीय जनसंघ की स्थापना की नींव पड़ी।

२१ अक्टूबर १९५१ को दिल्ली में भारतीय जनसंघ का राष्ट्रीय स्थापना सम्मेलन हुआ, इसमें औपचारिक रूप से डॉ. मुखर्जी को राष्ट्रीय अध्यक्ष घोषित किया गया।

डॉ. मुखर्जी ने अध्यक्षीय भाषण में कहा-"सुसंगठित विरोधी दल के अभाव के कारण ही कांग्रेस सरकार तानाशाह बनती जा रही है। इसी अभाव की पूर्ति के लिए सत्तारूढ़ दल पर उचित अंकुश लगाये रखने तथा स्वस्थ लोकतंत्र का मार्ग प्रशस्त करने के उद्देश्य से ही नये राजनीतिक दल भारतीय जनसंघ की स्थापना की गयी है।

"हमारे दल का विश्वास है कि भारत का भविष्य भारतीय संस्कृति और मर्यादा की उचित प्रतिष्ठा में है। भारत के सच्चे पुत्र और पुत्रियों को इस बात पर गर्व होना चाहिए कि उन्हें जो चिरयुगीन पितृव्य मिला है, वह अत्यंत महान और स्थायी है। हमारा यह उत्तरदायित्व है कि हम उसे कलुषित और पतोन्मुख न होने दें। स्वाधीन भारत का भविष्य भारतीय आदर्शों से प्राणवंत होना चाहिए, जो कालांतर में आवश्यकतानुसार परिवर्तित होते जाएं, ताकि वर्तमान वैज्ञानिक युग के अनुरूप बन सकें। हमारी शिक्षा पद्धति में इसका पर्याप्त आभास होना चाहिए। अत: जब हम धर्म राज्य अथवा कानूनी शासन का आदर्श रखते हैं, तब हम भारतीय संस्कृति की उच्चतम परम्परा का ही पालन करते हैं, जो सभी लोगों को सच्ची मैत्री और बन्धुत्व में आबद्ध करती है।''

भारत विभाजन को दुर्भाग्यपूर्ण बताते हुए उन्होंने कहा-"हमारी धारणा है कि भारत का विभाजन एक मूर्खतापूर्ण दु:खान्त घटना है। इससे न तो कोई उद्देश्य पूरा हुआ है और न ही किसी भी आर्थिक, राजनीतिक अथवा सांप्रदायिक समस्या को सुलझाने में सहायता मिली है। हम संयुक्त भारत

के आदर्श में विश्वास रखते हैं। हम शांतिपूर्ण तरीकों से उसे प्राप्त करना चाहते हैं। हमें विश्वास है कि दोनों राज्यों के लोग शीघ्र ही महसूस करेंगे कि इस एकीकरण से जनता को लाभ पहुंचेगा और इसी से हमारा देश सच्चे अर्थों में शक्ति और स्वाधीनता का दुर्ग बन सकेगा। जब तक पाकिस्तान का अस्तित्व रहेगा हम उसके प्रति 'जैसे को तैसा' की नीति का प्रतिपादन करेंगे। हम विभाजनजनक समस्याओं से विशेषकर पाकिस्तान से उजड़कर आनेवाले हिन्दुओं की निकासी, संपत्ति के बारे में संतोषजनक हल निकालने का विशेष रूप से प्रयत्न करेंगे। इन समस्याओं के प्रति हमारा दृष्टिकोण सांप्रदायिक बिल्कुल नहीं है। ये समस्याएं प्रमुखतया राजनीतिक व आर्थिक हैं और इन्हें न्यायोचित ढंग से सुलझाने का उत्तरदायित्व दोनों राज्यों भारत व पाकिस्तान पर है।''

नेहरूजी की पाकिस्तान के प्रति तुष्टिकरण की घातक नीति पर प्रहार करते हुए उन्होंने कहा-''जिस व्यक्ति ने मुस्लिम सांप्रदायिकता की वेदी पर भारतीय राष्ट्रीयता का बार-बार हनन किया है और जो विभाजन के बाद भी पाकिस्तान सरकार की सनकों के सामने लगातार झुकता चला आ रहा है, वही खड़ा होकर दूसरों पर सांप्रदायिकता का दोष लगाए यह उसके लिए शोभनीय नहीं है। भारत में मिस्टर नेहरू और उनके मित्रों की आगामी चुनावों में मुसलमानों का मत लेने के लिए उन्हें खुश करने की नई नीति के अतिरिक्त और कोई सांप्रदायिकता नहीं है। आज देश में प्रान्तीयवाद अथवा अन्य प्रकार के श्रेणीय तथा जातीय भेद अवश्य विद्यमान हैं। आइये हम परस्पर मिलकर इन बुराइयों का नाश करते हुए सच्चे अर्थों में प्रजातांत्रिक भारत की नींव रखें। मिस्टर नेहरू द्वारा उठाई गयी सांप्रदायिकता की पुकार देश के वास्तविक प्रश्नों को ओट देने के निमित्त ही है। आज देश के सम्मुख भूख, दरिद्रता, शोषण, कुशासन, भ्रष्टाचार, पाकिस्तान के सम्मुख आत्मसमर्पण आदि भीषण समस्याएं हैं और जिनकी जिम्मेदारी मुख्यतया कांग्रेस और इनकी सरकार पर है।''

नेहरूजी ने डॉ. मुखर्जी पर आरोप लगाया कि वे तथा जनसंघ सांप्रदायिकता भड़काने में लगे हुए हैं। प्रधानमंत्री जगह-जगह कहते थे कि

जनसंघ, हिन्दू महासभा आदि सांप्रदायिक हैं, जबकि कांग्रेस सेकुलर है।

डॉ. मुखर्जी ने उन्हें करारा उत्तर देते हुए कहा–"नेहरू जी यह बताएं कि मुस्लिम लीग के साथ समझौता करने के लिए पृथक मताधिकार का विषैला सिद्धांत किसने माना था? भारत का विभाजन किसने स्वीकार किया? सांप्रदायिकता की बलिवेदी पर देश का सर्वनाश करनेवाले कांग्रेसियों को हमें सांप्रदायिक बताने में शर्म क्यों नहीं आती?

किन्तु अगर अपनी जन्मभूमि से प्रेम करना सांप्रदायिकता है; दूसरी जातियों को हेय न मानते हुए अपनी जाति से प्रेम करना सांप्रदायिकता है; अगर हमें भारत में रहने वाले तीस करोड़ हिन्दुओं से जो सहस्र वर्ष की दासता से मुक्त हुए हैं, सहानुभूति है और हम उन्हें एकता के सूत्र में बांधने का प्रयास करते हैं; अगर हम अपनी अवलुप्त मर्यादा को उस विधि से प्राप्त करना चाहते हैं, जो हिन्दू धर्म के गतिशील सिद्धांतों से अनुप्राणित है और जिसके प्रतीक स्वामी विवेकानंद हैं, तो मुझे गर्व है कि मैं सांप्रदायिकतावादी हूं।''

एक बार नेहरू जी ने आवेश में आकर कहा–"मास्टर तारासिंह ने पंजाब तथा डॉ. मुखर्जी ने बंगाल के विभाजन का प्रचार कर वातावरण बिगाड़ा था। इन बातों से देश का विभाजन करानेवालों को बल मिला।''

डॉ. मुखर्जी ने नेहरूजी के इस निराधार आरोप की धज्जियां उड़ाते हुए कहा–"पं. नेहरू जैसे नेता के लिए यह बहुत लज्जाजनक है कि वे असत्य या अर्द्धसत्य बातों का प्रचार कर रहे हैं।''

उन्होंने कहा–"जब मुझे यह दृष्टिगोचर हुआ कि कांग्रेस, लीग और ब्रिटेन ने मिलकर देश के टुकड़े कर देने का निश्चय कर लिया है और हम इसे रोकने में असमर्थ हैं, तब मैंने पंजाब और बंगाल के विभाजन की मांग की। मैंने मांग की कि इन प्रांतों का कुछ हिस्सा तो कम से कम डूबने से बचाया जाए। मैं जिस बात के पक्ष में था और मैंने जिसके लिए काम भी किया, वह समूचे बंगाल और पंजाब को हड़पनेवाले पाकिस्तान के विभाजन की बात थी न कि भारत के। दोनों राजनीतिक पार्टियों, कांग्रेस और मुस्लिम लीग ने बिना जनता जनार्दन की इच्छा अथवा

सहमति के इसका निर्णय आप ही कर लिया था और इस तरह जनता को धोखे में रखा गया था।''

उन्होंने कहा-"अगर ऐसा करना पाप है, तो मैं अपने देशवासियों के सम्मुख अभियोगी बनकर उनका निर्णय जानने के लिए उपस्थित हूँ।''

उन्होंने जनसंघ की कार्यकारिणी गठित की और दिल्ली प्रदेश जनसंघ के अध्यक्ष पद पर सुविख्यात उपन्यासकार व चिंतक वैद्य गुरुदत्त को मनोनीत किया गया।

लोकसभा में नेतृत्व

स्वाधीन भारत की लोकसभा का पहला चुनाव १९५२ में कराया गया। कांग्रेस के पास असीमित साधन तथा अनेक दिग्गज नेतागण थे। भारतीय जनसंघ, हिन्दू महासभा तथा रामराज्य परिषद ने सीमित साधनों के बावजूद लोकसभा के चुनावं में अपने-अपने प्रत्याशी खड़े किये।

डॉ. मुखर्जी ने प्रो. बलराज मधोक आदि नेताओं के साथ देश के विभिन्न राज्यों का दौरा कर कांग्रेस की नीतिंयों पर कड़े प्रहार किये। लोगों को बताया कि कांग्रेस नेताओं ने किस प्रकार मुस्लिम लीग के आगे घुटने टेककर भारत विभाजन का रास्ता साफ किया। किस प्रकार पाकिस्तान बनते ही लाखों हिन्दुओं (सिखों) की पंजाब, बंगाल व सिंध में हत्याएं की गयीं। किस प्रकार लाखों हिन्दुओं को शरणार्थी बनकर भारत के शहरों में आना पड़ा।

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, आर्यसमाज तथा अन्य संगठनों के कार्यकर्ताओं ने जनसंघ के चुनाव अभियान में सहयोग दिया। चुनाव के परिणाम घोषित हुए। जनसंघ के तीन, रामराज्य परिषद के तीन तथा हिन्दू महासभा के चार सदस्य विजयी हुए। डॉ. मुखर्जी दक्षिणी कलकत्ता के निर्वाचन क्षेत्र से कांग्रेस तथा कम्युनिस्ट पार्टियों के प्रत्याशियों को बुरी तरह पराजित कर विजयी हुए।

हिन्दू महासभा का बहिष्कार नहीं

सोशलिस्ट पार्टी के दस तथा आचार्य कृपलानी की किसान मजदूर पार्टी के १२ सदस्य लोकसभा में पहुंचे थे। इन दोनों दलों ने मिलकर प्रजा सोशलिस्ट पार्टी का गठन कर लिया। इन सदस्यों में कोई भी बड़ा नेता नहीं था। प्रजा समाजवादी दल के नेता प्रो. अशोक मेहता ने कहा कि यदि डॉ. मुखर्जी हिन्दू महासभा के सांसदों का साथ त्याग दें तो वे उन्हें संयुक्त विपक्षी मोर्चे का नेता मनोनीत कर सकते हैं। डॉ. मुखर्जी

पद सुविधाओं के आकांक्षी नहीं थे। यदि वे सिद्धांतों की अपेक्षा पद को वरीयता देते तो केंद्रीय मंत्रिमंडल से त्यागपत्र ही क्यों देते?

डॉ. मुखर्जी ने स्पष्ट कह दिया-''वे हिन्दू महासभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष रहे हैं। हिन्दू महासभा के मंच से पूरे देश में राष्ट्रहित का शंखनाद करते रहे हैं। वे हिन्दू महासभा को सांप्रदायिक मानकर कैसे उसका त्याग कर सकते हैं?''

डॉ. मुखर्जी के नेतृत्व में ३० सदस्यों ने नेशनल डेमोक्रेटिव पार्टी का गठन किया। इनमें हिन्दू महासभा के निर्मलचंद्र चटर्जी, रामराज्य परिषद के पं. नंदलाल शास्त्री, अकाली दल के हुकमसिंह, जनसंघ के उमाशंकर त्रिवेदी, बी. रामचंद्र रेड्डी आदि विख्यात सदस्य थे।

शेख अब्दुल्ला की अवांछनीय गतिविधियां

शेख अब्दुल्ला ने कश्मीर को स्वतंत्र देश बनाकर वहां का सुल्तान बनने के सपने को साकार करने की कोशिशें शुरू कर दी थी। पं. प्रेमनाथ डोगरा के नेतृत्व में प्रजा परिषद शेख की इस राष्ट्रविरोधी आकांक्षा को सफल न होने देने के लिए कृत संकल्प थी। शेख अब्दुल्ला ने कश्मीर में अलग प्रधान, अलग विधान तथा अलग निशान (झंडा) के राग अलापने शुरू कर दिये थे। नेहरू जी का शेख को वरदहस्त प्राप्त था। कम्युनिस्ट पार्टियां भी शेख का समर्थन कर रही थीं। भारतीय संविधान के अस्थायी अनुच्छेद ३७० का शेख ने लाभ उठाना शुरू कर दिया। शेख खुलकर कश्मीर को स्वतंत्र रियासत घोषित करने लगे थे। अब्दुल्ला सरकार ने अंदर ही अंदर कश्मीर निवासी हिन्दुओं को शक्तिहीन बनाने के उद्देश्य से अनेक मुस्लिम बहुल जिलों का गठन कर दिया। जम्मू के प्रिंस ऑफ वेल्स कालेज (वर्तमान में जिसका नाम गांधी मेमोरियल कालेज है) में फरवरी १९५२ में क्रीडा एवं पुरस्कार समारोह में राष्ट्रध्वज की जगह नेशनल कांफ्रेंस का झंडा फहराया गया। छात्रों से जब इस झंडे को प्रणाम करने को कहा गया तो उन्होंने कहा-''हम पार्टी के झंडे को प्रणाम क्यों करें? राष्ट्रीय तिरंगा ध्वज फहराया जाना चाहिए।''

इन राष्ट्रभक्त छात्रों का उत्पीड़न किया गया। जम्मू के हजारों राष्ट्रवादी छात्रों ने अलग झंडे के विरोध में सड़कों पर उतरकर सत्याग्रह किया। इसका समाचार मिलते ही पूरे देश में शेख सरकार की अलगाववादी नीति का घोर विरोध किया गया।

शेख सरकार दमन पर उतारू हो गयी। ७२ घंटे का कर्फ्यू लगा दिया गया। पं. प्रेमनाथ डोगरा तथा अन्य सैकड़ों कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। पता चलते ही डॉ. मुखर्जी ने शेख सरकार की इस घातक नीति का डटकर विरोध किया। डॉ. मुखर्जी ने एक दिन बलराज मधोक से कहा–"लगता है जनसंघ व अन्य राष्ट्रवादी दलों को देर-सबेर शेख अब्दुल्ला की तानाशाही व राष्ट्रविरोधी गतिविधियों के विरुद्ध मैदान में आना ही होगा।"

डॉ. मुखर्जी ने २६ जून १९५२ को संसद में कश्मीर का मामला उठाते हुए कहा–"शेख अब्दुल्ला मुस्लिम लीग की भारत विभाजन की पृथकतावादी घातक नीतियों पर चलकर कश्मीर की अखण्डता के लिए खतरा पैदा कर रहे हैं। वे राष्ट्रभक्तों के दल प्रजा परिषद तथा पं. प्रेमनाथ डोगरा का उत्पीड़न करने पर उतारू हो गये हैं। वे धारा ३७० के बल पर पृथक संविधान, पृथक निशान चाहते हैं। कश्मीर अलग झंडा व अलग संविधान लेकर स्वतंत्र गणराज्य बने, यह कदापि सहन नहीं किया जाएगा।"

प्रखर सांसद व विचारक प्रो. एच. वी. कामथ तथा शिब्बनलाल सक्सेना आदि ने डॉ. मुखर्जी का समर्थन किया।

२९ जून १९५२ को जनसंघ की ओर से देशभर में कश्मीर दिवस मनाया गया। दिल्ली में आयोजित एक विराट सभा में डॉ. मुखर्जी ने चेतावनी दी कि यदि नेहरू जी व कांग्रेस शेख अब्दुल्ला की पृथकतावादी नीतियों को प्रोत्साहन देते रहे तो कश्मीर एक न एक दिन भारत के हाथों से निकल जाएगा।

नेहरू जी अपनी हठ पर अड़े रहे। उन्होंने १६ जुलाई को शेख अब्दुल्ला के साथ दिल्ली में समझौता किया। कश्मीर को पृथक नागरिकता, पृथक झंडे, पृथक संविधान व प्रधान की छूट दी गयी।

राष्ट्रवादी दलों ने इसका देशव्यापी विरोध किया। प्रजा परिषद ने जम्मू में ९ तथा १० अगस्त को इसके विरोध में सम्मेलन का आयोजन किया। डॉ. मुखर्जी सम्मेलन में भाग लेने जम्मू पहुंचे। रास्ते में रेलवे स्टेशनों पर उनके स्वागत के लिए हजारों-हजारों लोग उमड़ते रहे। उन्होंने आश्वासन दिया कि कश्मीर में भारतीय संविधान, भारतीय प्रधान तथा भारतीय निशान रहे, इसके लिए मैं जीवन की बाजी लगाने का संकल्प लेता हूँ।''

'नेहरू-लियाकत समझौते' के बाद से पूर्वी पाकिस्तान में अल्पसंख्यक हिन्दुओं के उत्पीड़न में और तेजी आ गयी थी। पूर्वी बंगाल में हिन्दू युवतियों का सरेआम अपहरण किये जाने की घटनाएं बढ़ रही थीं। हिन्दुओं से कहा जाता था कि या तो वे धर्मपरिवर्तन कर मुसलमान बन जाएं अन्यथा भारत चले जाएं। १५ अक्टूबर १९५२ को पूर्वी पाकिस्तान में पासपोर्ट प्रणाली लागू कर दी गयी। इससे अपना धर्म व प्राण बचाकर भारत आने वाले हिन्दुओं के लिए नया संकट पैदा हो गया। डॉ. मुखर्जी ने नेहरूजी से मिलकर पासपोर्ट प्रणाली रद्द करने के लिए पाकिस्तान पर दबाव डालने को कहा, किन्तु उन्होंने कुछ नहीं किया।

कांग्रेस के पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष आचार्य जे. बी. कृपलानी ने डॉ. मुखर्जी के विचारों का खुलकर समर्थन करते हुए पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं के धर्म व प्राणों की रक्षा के लिए कड़ी नीति अपनाए जाने पर बल दिया। १६ अक्टूबर को कलकत्ता में हुई विशाल सभा में डॉ. मुखर्जी व आचार्य कृपलानी ने भारत सरकार की पूर्वी-पश्चिमी पाकिस्तान के अल्पसंख्यक हिन्दुओं के प्रति उपेक्षा की नीति की जमकर आलोचना की।

डॉ. मुखर्जी ने कहा-''अल्पसंख्यक हिन्दुओं की सुरक्षा की जिम्मेदारी निभाने में पाक सरकार की विफलता के कारण भारत इस विभाजन की पूरी समस्या का पुन: परीक्षण करे और तदनुसार किसी भी आत्माभिमानी देश के समान कार्यशील हो। अगर यह निष्क्रमण न रोका गया तो इससे केवल उत्तर-पश्चिमी भारत की ही नहीं, अपितु समस्त देश की सुरक्षा खतरे में पड़ जाएगी।''

उन्होंने कहा-"हमारी अपनी सरकार की कमजोरी और अस्थिरता के कारण ही अशिष्ट व्यवहार करने में पाकिस्तान की हिम्मत बढ़ती जा रही है। अगर भारत सरकार दृढ़ता की नीति अपनाती और पाक सरकार यह समझती कि उसके अपने देश के कुकृत्यों का उसकी आर्थिक-राजनीतिक दशा पर आघातकारी प्रभाव पड़ेगा, तब वह ऐसा कभी नहीं करती।''

उन्होंने कहा-"नेहरू-लियाकतअली पैक्ट मृत होकर समाप्त हो चुका है। भारत और पाकिस्तान के मध्य कई समझौते हो चुके हैं। परन्तु क्रियात्मक रूप में उनकी पाक द्वारा अवहेलना ही होती रही है। उन्होंने मांग की कि यह तुष्टिकरण की नीति या समझौते की और देखें क्या होता है की नीति अवश्यमेव बदली जानी चाहिए।''

डॉ. मुखर्जी के प्रयास से नवम्बर में कलकत्ता में श्रीमती सुचेता कृपलानी की अध्यक्षता में पूर्वी बंगाल अल्पसंख्यक सम्मेलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन में भारत सरकार से पाकिस्तान पर आर्थिक दबाव डालकर अल्पसंख्यक हिन्दुओं की रक्षा की मांग की गयी।

लोकसभा में भाषण

१५ नवंबर १९५२ को डॉ. मुखर्जी ने लोकसभा में पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं के धर्म व प्राणों की सुरक्षा की मांग करते हुए अत्यंत प्रभावी ढंग से कहा-"क्या वर्तमान परिस्थितियों में अल्पसंख्यकों के लिए पाकिस्तान में रहना संभव हो सकेगा? यही एक आधारभूत प्रश्न है। अगर संसद इसे संभव नहीं समझती तो यह निर्णय करे कि स्वतंत्र भारत सरकार उनके संरक्षणार्थ कोई प्रभावकारी कदम उठा सकती है या नहीं।''

डॉ. मुखर्जी ने पूर्वी बंगाल के कुछ हिन्दु हरिजनों की व्यथा सुनाते हुए कहा कि वे अपने धर्म, संपत्ति, प्राण तथा मर्यादा की रक्षा के लिए भारत आए। उन्हें भारत में नहीं रहने दिया गया। लियाकतअली पैक्ट के नाम पर वापस जबर्दस्ती भेजने- उन्हें मौत के मुंह में धकेलने का शर्मनाक कार्य किया गया। उन हरिजनों ने मुझसे कहा कि हम भारत में विस्थापित होने के लिए आये थे, किन्तु हमें जबर्दस्ती वापस भेजा रहा है। हमने

भला कौनसा अपराध किया है? हम पाकिस्तान नहीं चाहते थे। हमें वहां मुसीबतें सहनी पड़ीं, अपने बच्चों की हत्याएं होती देखनी पड़ीं, केवल इसीलिए कि हम हिन्दू हैं। क्या हमें इस्लाम ग्रहण करने के लिए नहीं धकेला जा रहा है?''

डॉ. मुखर्जी ने हिन्दुओं के उत्पीड़न के अनेक लोमहर्षक प्रकरण सुनाए तो अनेक कांग्रेसी सांसदों की भी आंखों से अश्रु ढुलक पड़े।

डॉ. मुखर्जी ने कहा–"हम नहीं चाहते कि लोग घुला-घुलाकर मारे जाएं, अगर उन्हें मरना ही है तो उन्हें एक बार ही में मर जाने दो। यह तो भयानक विपत्ति और अपमान की दारुण शृंखला है। इसका असर केवल पीड़ित व्यक्ति पर ही नहीं पड़ता, अपितु इससे राष्ट्र की मान-मर्यादा को भी धक्का लगता है।''

उन्होंने दृढ़ता से कहा–"यदि हिन्दू अल्पसंख्यकों की रक्षा के लिए हमें सेना की सहायता लेनी पड़े तो लेनी चाहिए।

"मैं कोई युद्ध का पक्ष नहीं ले रहा हूँ। अगर पूर्वी पाकिस्तान के अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए इसके सिवाय कोई चारा न हो तो भारत सरकार को एक दिन इस पर सोचना ही पड़ेगा।'' उनका विचार था कि "ऐसी स्थिति का निर्माण पूर्णतः रोका जा सकता था, बशर्ते प्रधानमंत्री यह घोषणा कर दें कि हमारी सरकार दृढ़ता से कार्य करेगी और दुर्बलता या तुष्टिकरण की कोई भी नीति नहीं अपनाएगी।

"मुझे बहुत आश्चर्य होता है कि जब पं. नेहरू कहते हैं कि मैं इसका कोई हल नहीं ढूंढ़ सकता। मुझे उनसे सहानुभूति है। किन्तु वे तुष्टिकरण को बड़ा महत्व देते हैं और इस ओर बराबर क्रियाशील हैं। किन्तु किसकी कीमत पर? अगर वे अपनी स्वयं की कीमत पर करते हैं, तो मुझे कोई शिकायत नहीं, किन्तु उन्हें इसके लिए देश को दांव पर लगाने का क्या अधिकार है?''

विदेशों में भगवान बुद्ध का संदेश

डॉ. मुखर्जी भारत में जन्में सभी सम्प्रदायों, सनातनधर्मी, आर्यसमाजी,

सिख, जैनी, बौद्ध आदि को हिन्दू समाज का अटूट अंग मानते थे। इसलिए उन्होंने जहां सनातनधर्म सभा के अधिवेशन में भाग लिया था, वहीं दिल्ली में आर्य महासम्मेलन की अध्यक्षता की थी। उनकी आकांक्षा थी कि भगवान बुद्ध के देश-विदेश के असंख्य अनुयायी बौद्धों को संगठित कर भगवान बुद्ध के महान उपदेशों को पूरे संसार में जन-जन तक पहुंचाया जाए।

मार्च सन् १९५२ में डॉ. मुखर्जी महाबोधि सोसायटी के अध्यक्ष के नाते भगवान बुद्ध के दो प्रधान शिष्यों सारिपुत्त तथा महामोग्गलामन के पवित्र भस्मावशेष लेकर बर्मा गये। अक्टूबर में वे कंबोडिया व इंडोचाइना गये। इन सभी देशों के बौद्ध मतावलम्बियों ने डॉ. मुखर्जी व भस्मावशेषों का हार्दिक स्वागत किया। उन्होंने जब भगवान बुद्ध के पावन जीवन व उपदेशों पर प्रकाश डाला तो बौद्ध लामा तथा अन्य बौद्ध उनके गहन अध्ययन को देखकर चमत्कृत हो गये।

डॉ. मुखर्जी ने कंबोडिया की राजधानी पन्नानपेन्ह में लाखों बौद्धों को संबोधित करते हुए कहा-"भगवान बुद्ध भारत के सनातनधर्मियों के दशावतार के रूप में पूजे जाते हैं। भगवान बुद्ध ने हिन्दू समाज में व्याप्त ऊंच-नीच तथा अन्य कुरीतियों के उन्मूलन में जो रचनात्मक योगदान अपने उपदेशों के माध्यम से किया, उसे भुलाया नहीं जा सकता।"

डॉ. मुखर्जी अंगकोरवाट के सुविख्यात हिन्दू मंदिरों के दर्शन कर भावविभोर हो उठे।

भस्मावशेषों के विदेशी बौद्धों को दर्शन कराने के बाद उन्हें सांची के नये बौद्ध विहार में स्थापित किया गया। नवंबर १९५२ में सांची में अन्तर्राष्ट्रीय बौद्ध सम्मेलन हुआ, जिसकी अध्यक्षता उपराष्ट्रपति डॉ. एस. राधकृष्णन ने की। डॉ. मुखर्जी ने स्वागत भाषण में पूरे देश से आये बौद्ध भिक्षुओं तथा विद्वानों का स्वागत करते हुए आशा व्यक्त की कि भगवान बुद्ध की पुण्य भूमि-जन्मभूमि भारत तथा संसार भर के बौद्धों के बीच आत्मिक संबंध सदैव सुदृढ़ व स्थायी रहेंगे।

कानपुर में जनसंघ का अधिवेशन

दिसंबर १९५२ में कानपुर में भारतीय जनसंघ का प्रथम अखिल भारतीय अधिवेशन आयोजित किया गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अनेक वर्षों तक वरिष्ठ प्रचारक रहे पं. दीनदयाल उपाध्याय जी को जनसंघ का महामंत्री मनोनीत किया गया।

डॉ. मुखर्जी ने कानपुर सम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण में कहा-"भारतीय स्वतंत्रता को यदि सारपूर्ण बनाना है तो इसे भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्वों और मूल्यों को ठीक-ठीक समझने और उनके प्रचार-प्रसार में सहायक बनना पड़ेगा। कोई भी राष्ट्र जो अपने अतीत की उपलब्धियों से गर्वान्वित नहीं होता, अथवा प्रेरणा नहीं लेता, वह न तो कभी अपने वर्तमान का निर्माण कर सकता है और न ही कभी भविष्य की रूपरेखा बना सकता है। कोई दुर्बल राष्ट्र कभी महानता की ओर नहीं बढ़ सकता।''

पूर्वी पाकिस्तान के पीड़ित अल्पसंख्यक हिन्दुओं की व्यथा की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा-"यदि वे वहाँ वर्तमान दयनीय स्थिति में रहते हैं, तो उन्हें पाकिस्तानियों का क्रीतदास अथवा मुसलमान बनकर रहना होगा। यह दुर्भाग्य की बात है कि भारत सरकार उनके धर्म, संपत्ति व प्राणों की रक्षा के प्रति पूर्ण उपेक्षाभाव अपनाकर कायरतापूर्ण नीति का परिचय दे रही है।''

शेख अब्दुल्ला द्वारा कश्मीर को स्वतंत्र राज्य बनाये जाने तथा वहाँ की प्रजा परिषद के राष्ट्रभक्त नेता पं. प्रेमनाथ डोगरा तथा अन्य कार्यकर्ताओं के उत्पीड़न की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा-"मैं श्री नेहरू तथा शेख अब्दुल्ला से प्रार्थना करूंगा कि वे झूठे मान की चिंता न करते हुए जम्मू के राष्ट्रभक्त नागरिकों पर अत्याचार बंद करवा दें। शेख के कश्मीर को अलग राज्य बनाने के षड़यंत्र की अनदेखी किया जाना राष्ट्र

की अखण्डता के लिए घातक सिद्ध होगा। जनसंघ इस स्थिति में मूक दर्शक नहीं बना रहेगा।''

डॉ. मुखर्जी की अध्यक्षता में कानपुर के सम्मेलन में प्रस्ताव पारित कर प्रजा परिषद द्वारा शेख के षड़यंत्र के विरुद्ध शुरू किये गये आंदोलन को सक्रिय समर्थन देने की घोषणा की गयी।

कानपुर के इस अधिवेशन में निर्णय किया गया कि जनसंघ का एक सात सदस्यीय प्रतिनिधिमंडल, जिसमें वैद्य गुरुदत्त, डॉ. भाई महावीर, जयपुर के रिटायर्ड जज चिरंजीलाल मिश्र, राजस्थान विधानसभा के डिप्टी स्पीकर लालसिंह शक्तावत, श्री हरिदत्त, प्रेमनाथ जोशी तथा ठाकुर उम्मेदसिंह हों, जम्मू-कश्मीर जाए तथा वहां की स्थिति का अवलोकन करे कि प्रजा परिषद का आंदोलन जारी रहना चाहिए या स्थगित कर देना चाहिए। आवेदन के बाद कश्मीर सरकार ने प्रतिनिधिमंडल को राज्य में जाने का परमिट देने से इंकार कर दिया।

कश्मीर में प्रजा परिषद के कार्यकर्ताओं के उत्पीड़न की घटनाएं बढ़ती जा रही थीं। शेख अब्दुल्ला अलगाववाद को पूरी तरह बढ़ावा दे रहे थे।

जिस प्रकार भगवान श्रीकृष्ण ने महाभारत का युद्ध टालने के लिए अंतिम क्षणों तक प्रयास किये, उसी तरह डॉ. मुखर्जी ने नेहरू जी को बार-बार पत्र लिखकर कश्मीर में शेख अब्दुल्ला को निर्देश देकर प्रजा परिषद की न्यायोचित तथा राष्ट्रहित की मांगे स्वीकार किये जाने का सुझाव दिया।

नेहरू जी को पत्र

९ जनवरी १९५३ को डॉ. मुखर्जी ने नेहरू जी को पत्र में लिखा-"आप और शेख अब्दुल्ला को अब तक यह समझ लेना चाहिए था कि यह आंदोलन बल प्रयोग अथवा आतंक से नहीं दबेगा.......। जम्मू और कश्मीर की समस्या पर पार्टी की दृष्टि से विचार नहीं करना चाहिए। यह एक राष्ट्रीय समस्या है, जिसके लिए एक संयुक्त अभिमत बनाने का प्रयत्न होना चाहिए।

"जम्मू और कश्मीर भारत का एक अभिन्न अंग है और इस हेतु शेष भारत के लोगों का इस राज्य के मामलों में रुचि लेना बिल्कुल स्वाभाविक और उचित है।''

उन्होंने पत्र में चेतावनी दी-"जम्मू के लोग किन्हीं भी परिस्थितियों में भारत के साथ अपना संबंध तोड़ने को तैयार नहीं हैं। विलय के इस मूल प्रश्न को एक बार हमेशा के लिए सुलझाने में जितनी देर होगी उतनी ही गुत्थियाँ तथा अशांति की संभावनाएं बढ़ेंगी।''

डॉ. मुखर्जी ने पत्र में लिखा-"क्या यह मांग करना जम्मूवासियों का पैतृक अधिकार नहीं है कि वे उसी संविधान से अनुशासित होंगे जो शेष भारत में व्यवहृत है। इन लोगों का यह नारा 'एक निशान, एक विधान, एक प्रधान' उनकी देशानुरागपूर्ण भावनाओं की अभिव्यक्ति है, जिसके द्वारा वे अपना संघर्ष चला रहे हैं।''

नेहरूजी ने अपने भाषण में प्रजा परिषद के आंदोलन और मांगों को सांप्रदायिक बताया। डॉ. मुखर्जी ने उनके आरोप को निराधार बताते हुए ३ फरवरी के पत्र में लिखा-"यह अत्यंत अनुचित दोषारोपण है और इस तरह की बातें करके आप शायद अनजाने में ही अपने पक्ष की कमजोरी पर आवरण डालना चाहते हैं। हमने राष्ट्रीयता तथा देशभक्ति की उच्च भावनाओं से प्रेरित होकर ही इस समस्या पर विचार किया है। मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि आप शांत होकर सोंचे कि मुस्लिम साम्प्रदायिकता के विरुद्ध खड़ा न होने के कितने भयंकर परिणाम भुगतने पड़े हैं।''

पत्र में डॉ. मुखर्जी ने लिखा-"प्रजा परिषद और हम सभी चाहते हैं कि पूरी जम्मू-कश्मीर रियासत उसी संविधान से परिचालित हो, जो शेष भारत में है। क्या यह कामना कोई साम्प्रदायिक, प्रतिक्रियावादी अथवा राष्ट्रघातक है? यह आश्चर्यजनक है कि आप शेख अब्दुल्ला और उनके साथियों द्वारा गृहीत पृथकवादिता को राष्ट्रीय और देशभक्तिपूर्ण कहकर उसकी प्रशंसा करते हैं और भारत की आधारभूत एकता और संगठन की तथा साधारण भारतीय नागरिकों के समान शासित होने की प्रजा परिषद की न्यायोचित इच्छा को आप देश विरोधी समझते हैं।''

नेहरू जी पर शेख अब्दुल्ला का रंग पूरी तरह चढ़ा हुआ था। उन्होंने मुखर्जी के पत्र का उत्तर ५ फरवरी को दिया, जिसमें लिखा-"मेरे विचार से प्रजा परिषद का यह आंदोलन न केवल साम्प्रदायिक है, वरन् इसे भारत में विद्यमान साम्प्रदायिक, संकुचित मनोवृत्तिवाले तत्वों का समर्थन भी प्राप्त है। अब केवल यही रास्ता रह जाता है कि इस नितान्त सुविचारपूर्ण आंदोलन का विरोध किया जाए।"

नेहरू जी के उपरोक्त विचारों ने डॉ. मुखर्जी को झकझोर डाला। वे समझ गये नेहरू जी कश्मीर का भाग्य पूरी तरह शेख अब्दुल्ला जैसे कट्टर मुस्लिम मानसिकता वाले व्यक्ति के हाथों सौंप चुके हैं। उल्टे प्रजा परिषद व जनसंघ पर साम्प्रदायिक होने का कुटिल आरोप लगा रहे हैं।

नेहरू जी से प्रोत्साहन पाकर जम्मू में प्रजा परिषद के कार्यकर्ताओं का उत्पीड़न और तेज कर दिया गया। पंजाब, दिल्ली में जनसंघ के अनेक कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया।

डॉ. मुखर्जी ने नेहरू जी को कई पत्र लिखकर वार्ता द्वारा कश्मीर समस्या का राष्ट्रहित में समाधान खोजने का परामर्श दिया। किन्तु नेहरू जी अपनी हठ पर अड़े रहे। अन्ततोगत्वा आंदोलन का सहारा लेना अनिवार्य हो गया।

जम्मू-कश्मीर दिवस

डॉ. मुखर्जी ने पं. दीनदयाल उपाध्याय, प्रो. बलराज मधोक, वैद्य गुरुदत्त तथा अन्य सहयोगियों से विचार-विमर्श करने के बाद ५ मार्च १९५३ को समस्त देश में जम्मू-कश्मीर दिवस मनाने का आह्वान किया। उन्होंने हिन्दू महासभा के नेता डॉ. नारायण भास्कर खरे, श्री निर्मल चंद्र चटर्जी, रामराज्य परिषद के महामंत्री सांसद पं. नंदलाल शास्त्री आदि से परामर्श कर सहयोग देने का आह्वान किया।

डॉ. मुखर्जी ने पश्चिमी उत्तर प्रदेश का भ्रमण कर सभाओं में कश्मीर में चल रहे प्रजा परिषद के आंदोलन की जानकारी दी। ५ मार्च को

दिल्ली में धार्मिक जगत के सुविख्यात नेता स्वामी करपात्री जी महाराज की अध्यक्षता में एक विराट सभा का आयोजन किया गया। सभा में हिन्दू समाज के सभी संप्रदायों के लाखों व्यक्ति उपस्थित थे। डॉ. मुखर्जी ने अपने ओजस्वी व तथ्यपूर्ण भाषण में शेख अब्दुल्ला के षड़यंत्र, प्रजा परिषद के राष्ट्रहितैषी आंदोलन पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए चेतावनी दी कि कश्मीर को भारत से अलग करने की कुटिल चालों को विफल नहीं किया गया तो भारत के अन्य कई भागों में भी पृथकतावाद की मांग उठायी जा सकती है।

स्वामी करपात्री जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा-''कश्मीर भारत का मुकुट है। उसके बिना भारत अधूरा है। अत: डॉ. मुखर्जी के कुशल व तेजस्वी नेतृत्व में इसकी रक्षा का संकल्प लेना राष्ट्रीय धर्म है।''

सभा में घोषणा की गयी कि जम्मू में शेख अब्दुल्ला की पुलिस की गोलियों के शिकार हुए प्रजा परिषद के बलिदानी कार्यकर्ताओं की भस्म का ६ मार्च को दिल्ली में जुलूस निकाला जाएगा। डॉ. मुखर्जी, एन. सी. चटर्जी, प. नंदलाल शास्त्री तथा वैद्य गुरुदत्त इस जुलूस का नेतृत्व करेंगे। सरकार ने धारा १४४ लागू कर दी और डॉ. मुखर्जी तथा उनके तीनों साथियों को गिरफ्तार कर लिया गया।

प्रत्यक्षीकरण याचिका पर न्यायालय ने चारों को जेल से रिहा करने के आदेश दिये। दिल्ली प्रदेश जनसंघ के अध्यक्ष वैद्य गुरुदत्त को पांच दिन बाद पुन: डिटेंशन एक्ट के अंतर्गत गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया। उन्होंने याचिका दायर कर दी। डेढ़ माह दिल्ली जेल में रहने के बाद उन्हें मुक्त कर दिया गया।

सत्याग्रह का बिगुल

राजधानी दिल्ली को केंद्र बनाकर कश्मीर की रक्षा के लिए सत्याग्रह का बिगुल बजा दिया गया। भारतीय जनसंघ के राष्ट्रीय महामंत्री पं. दीनदयाल उपाध्याय जी को सत्याग्रह का प्रभारी मनोनीत किया गया। हिन्दू महासभा भवन सत्याग्रह का केंद्र बनाया गया।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयं सेवकों ने नगर-नगर, गाँव-गाँव पहुंचकर कश्मीर की रक्षा का संदेश प्रसारित किया। पूरे देश के सत्याग्रही जत्थे दिल्ली पहुंचने लगे।

शेख अब्दुल्ला आंदोलन की तीव्रता से बौखला उठे। उन्होंने जम्मू के क्षेत्रों में डोगरा पुलिस की जगह कश्मीर पुलिस, जिसमें अधिकांश मुसलमान थे, नियुक्त करवा दी। आतंक फैलाने के लिए जनता पर अमानवीय अत्याचार ढाये जाने लगे।

डॉ. मुखर्जी ने हिन्दू महासभा के नेता संसद सदस्य विष्णु घनश्याम देशपाण्डे तथा उमाशंकर त्रिवेदी को स्थिति का अवलोकन करने जम्मू भेजा। उन्हें जम्मू में प्रवेश की अनुमति नहीं दी गयी तथा जालन्धर में गिरफ्तार कर लिया गया।

सत्याग्रहियों के जत्थे दिल्ली पहुंच रहे थे। दस हजार से ज्यादा राष्ट्रभक्तों ने सत्याग्रह कर जम्मू-कश्मीर में एक विधान, एक प्रधान तथा एक निशान लागू करने की मांग करते हुए गिरफ्तारियां दीं।

प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू इससे बौखला उठे। जगह-जगह सभाओं में जनसंघ, प्रजा परिषद तथा अन्य हिन्दू संगठनों पर साम्प्रदायिकता भड़काने का आरोप लगाने लगे। अंत में डाक्टर मुखर्जी ने घोषणा की कि वे स्वयं बिना परमिट (अनुमति पत्र) लिए जम्मू-कश्मीर जाएंगे तथा वहां चल रहे प्रजा परिषद के आंदोलन का अवलोकन करेंगे।

कश्मीर की ओर प्रस्थान

डॉ. मुखर्जी इस बात से बहुत व्यथित थे कि देश के नागरिक को अपने ही देश के एक राज्य जम्मू-कश्मीर जाने के लिए अनुमति पत्र लेना पड़ता है। पाकिस्तानी कबाइलियों के आक्रमण के बाद तथा पाकिस्तान की नीयत को देखते हुए सुरक्षा कारणों से यह निर्णय लिया गया था कि संदिग्ध व्यक्तियों के प्रवेश कराने में सतर्कता बरती जानी चाहिए।

श्री उमाशंकर त्रिवेदी तथा विष्णु घनश्याम देशपाण्डे देश के प्रमुख नेताओं में से थे, सांसद भी थे। उन्हें प्रवेश की अनुमति न देकर गिरफ्तार कर लिये जाने की घटना ने डॉ. मुखर्जी के हृदय को झकझोर डाला था। इसीलिए उन्होंने निर्णय लिया कि वे बिना परमिट लिए ही जम्मू जाएंगे।

८ मई १९५३ को दिल्ली से पंजाब जाने वाली रेल के डिब्बे में बैठे। उनके साथ सुविख्यात उपन्यासकार वैद्य गुरुदत्त जी, प्रो. बलराज मधोक, अटलबिहारी वाजपेयी, डॉ. वर्मन तथा टेकचंद्र शर्मा भी रवाना हुए।

दिल्ली रेलवे स्टेशन पर उन्हें विदाई देने के लिए भारतीय जनसंघ, हिन्दू महासभा, आर्यसमाज तथा अन्य संगठनों के हजारों कार्यकर्ता उपस्थित थे। पुष्पमालाएं पहिनाकर तथा पुष्पवृष्टि कर भारत माता की जय तथा भारत केसरी डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी की जय के उद्घोषों से स्टेशन गूंज उठा। डॉ. मुखर्जी ने विदाई देने आए स्वागतकर्ताओं को संबोधित करते हुए कहा-"शेख अब्दुल्ला ने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में मुस्लिम कट्टरता का पाठ सीखा। श्रीनगर पहुंचकर मुस्लिम कांफ्रेंस संस्था का गठन कर वहां के हिन्दू महाराजा के विरुद्ध विषैला वातावरण निर्माण किया। बाद में नेहरू जी से मैत्री गांठकर अपने को सेकुलर सिद्ध करने के लिए अपनी संस्था का नाम बदलकर नेशनल कांफ्रेंस रख लिया। श्रीनगर घाटी के कट्टरपंथी मुसलमानों को हिन्दू राज्य के विरुद्ध एकजुट

किया। आज वह भारत में विधिवत् विलय किये गये कश्मीर को स्वतंत्र कश्मीर घोषित करा कर उसका सुल्तान बनने का सपना संजोये हुए है।

"शेख ने नेहरू जी पर दबाव बनाकर राज्य में अलग प्रधान, अलग विधान तथा अलग निशान का प्रावधान करा लिया है।''

उन्होंने कहा कि प्रजा परिषद ने उसकी अलगाववादी गतिविधियों को पं. प्रेमनाथ डोगरा के नेतृत्व में चुनौती दी। शेख सरकार ने प्रजा परिषद के आंदोलन का दमन शुरू कर दिया। जम्मू में अब तक इस राष्ट्रहितैषी आंदोलन के दौरान ३० सत्याग्रही गोली के शिकार बन चुके हैं। २६०० व्यक्ति गिरफ्तार किये जा चुके हैं। आज भी जम्मू में दमन चक्र जारी है।

"मैं अपने कुछ सहयोगियों के साथ वहां की स्थिति का अवलोकन करने जम्मू जा रहा हूँ। मैं शेख अब्दुल्ला से मिलकर इस समस्या का निदान करने की इच्छा भी रखता हूँ।''

दिल्ली से अम्बाला तक के बीच के रेलवे स्टेशनों पर अपार जनसमूह ने डॉ. मुखर्जी का भंव्य स्वागत किया। 'नेहरूशाही नहीं चलेगी', 'शेखशाही नहीं चलेगी', 'एक देश में दो प्रधान-दो निशान नहीं चलेंगे', 'कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है' जैसे नारों से स्टेशन गूंज उठे।

डॉ. मुखर्जी ने अम्बाला से निम्न तार संदेश शेख अब्दुल्ला को भेजा-"मैं जम्मू जा रहा हूँ, बिना परमिट के। मेरा वहाँ जाने का प्रयोजन वहाँ की परिस्थिति का अवलोकन कर किसी प्रकार शांति स्थापित करना है। मैं आपसे भी मिलना चाहुँगा यदि संभव हुआ तो।''

अम्बाला से कार द्वारा वे शाहबाद होते हुए करनाल पहुंचे। करनाल में हजारों लोगों ने उनका भव्य स्वागत किया। उन्होंने सभा में भाषण करते हुए कहा-"श्री जवाहरलाल नेहरू ने पार्लियामेंट में कहा है कि जम्मू-कश्मीर का भारत में शत-प्रतिशत विलय हो चुका है। मैं नेहरू जी के इस कथन की परीक्षा करने जा रहा हूँ। मेरा विचार है कि भारत के प्रत्येक भाग में भारत के हरेक नागरिक को आने-जाने का मौलिक अधिकार है। मैंने पहले ही यह घोषित किया है कि मैं वहाँ आंदोलन को

प्रोत्साहन देने नहीं जा रहा। अब देखना है कि नेहरू जी और शेख अब्दुल्ला इस विषय में क्या करते हैं।''

पानीपत में भी उनका अपार भीड़ ने जय-जयकार करते हुए भव्य स्वागत किया। उन्होंने पत्रकारों से बातचीत करते हुए कहा-''कैसी विडम्बना है कि जो देश की अखण्डता बनाये रखना चाहते हैं, वे साम्प्रदायिक बताए जाते हैं। जो मजहब के आधार पर मुसलमानों के लिए देश का विभाजन करने को तैयार हो गये अथवा कश्मीर को स्वतंत्र मुस्लिम स्टेट बनाने को तैयार हैं, वे नेशलिस्ट हो गये।''

फगवाड़ा में स्टेशन पर दस हजार से ज्यादा लोग उनका स्वागत करने के लिए उपस्थित थे। उन्होंने विराट सभा में ओजस्वी वाणी में कहा-''पं. नेहरू एक तिहाई कश्मीर पाकिस्तान को दे चुके हैं। ऐसे संकेत मिल रहे हैं कि शेख अब्दुल्ला के दबाव में आकर जम्मू कश्मीर को स्वतंत्र मुस्लिम रियासत बनाने का षड़यंत्र रचा जा रहा है। हम शेष बचे कश्मीर की एक इंच भूमि भी विदेशियों के हाथ में नहीं जाने देंगे।''

फगवाड़ा में ही उन्हें शेख अब्दुल्ला का उत्तर मिला, जिसमें कहा गया था-''मैं आपके जम्मू जाने से कुछ उपयोगी कार्य सिद्ध होने की आशा नहीं करता।''

जालन्धर में भी उनका हार्दिक स्वागत किया गया।

जालन्धर से रेल द्वारा वे अमृतसर के लिए रवाना हुए। उनके रेल डिब्बे में पहले से बैठे एक सज्जन ने उनके पास आकर अपना परिचय देते हुए कहा-''मैं गुरुदासपुर का डिप्टी कमिश्नर हूं। पंजाब सरकार ने निर्णय किया है कि वह आपको पठानकोट तक नहीं जाने देगी।''

रेल अमृतसर पहुंची, वहाँ बीस हजार से ज्यादा लोग स्वागत के लिए तत्पर मिले। आर्यसमाज मंदिर में हुई विराट सभा में डॉ. मुखर्जी ने अपने भाषण में कश्मीर की वास्तविक स्थिति का वर्णन किया। पठानकोट में भी अपार भीड़ ने उनका हार्दिक स्वागत किया। डिप्टी कमिश्नर ने उनसे मिलकर कहा-''मुझे आदेश मिला है कि मैं आपको बिना परमिट जम्मू की ओर जाने दूँ।''

वे जनसंघ के कुछ कार्यकर्ताओं के साथ पठानकोट से जम्मू के लिए रवाना हुए। सायंकाल चार बजे उनको लेकर जीप रावी पुल के इस ओर माधेपुर पोस्ट पर पहुंची। पठानकोट तथा गुरुदासपुर के रेजीडेंट मजिस्ट्रेट पुलिस बल के साथ उपस्थित थे। जब जीप के लिए परमिट मांगा गया तो उत्तर मिला-''पुल के उस पार लखनपुर पोस्ट तक पहुंचें परमिट वहाँ मिल जाएगा।''

जीप जैसे ही रावी नदी के पुल के आधे भाग तक पहुंची कि वहाँ खड़े कठुआ के पुलिस सुपरिन्टेंन्डेंट ने रास्ता रोक कर उन्हें जम्मू-कश्मीर पुलिस के इंस्पेक्टर जनरल का आदेश थमा दिया, जिसमें लिखा था-''डॉ. मुखर्जी ऐसा कार्य कर रहे हैं, जिससे जनता की सुरक्षा और शांति खतरे में पड़ने की आशंका है, इसलिए उनके जम्मू-कश्मीर में प्रवेश को प्रतिबंधित किया जाता है।''

उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया।

डॉ. मुखर्जी ने साथियों से कहा-''मुझे लगता है कि यह केंद्र सरकार व जम्मू-कश्मीर सरकार का सम्मिलित षड़यंत्र है।'' उन्होंने अटलबिहारी वाजपेयी को संकेत देकर कहा-'देशवासियों को जाकर बता दो कि मैंने जम्मू-कश्मीर राज्य में प्रवेश कर लिया है, किन्तु एक कैदी के रूप में।''

श्रीनगर में नजरबंद

पुलिस ने डॉ. मुखर्जी से जीप से उतरने की प्रार्थना की। सुपरिन्टेन्डेंट से वैद्य गुरुदत्त तथा टेकचंद शर्मा ने कहा-''हम दोनों भी इनके साथ प्रतिबंध तोड़कर जम्मू-कश्मीर में प्रवेश कर रहे हैं।''

कुछ देर बाद पुलिस की एक जीप में बिठाकर तीनों को श्रीनगर की ओर रवाना कर दिया गया।

अगले दिन १२ मई को तीनों को श्रीनगर के निशात बाग के पास के एक छोटे से बंगले में ले जाकर नजरबंदी की स्थिति में रखा गया।

डॉ. मुखर्जी के बगल के कमरे में वैद्य गुरुदत्त जी ठहराये गये। टेकचंद शर्मा को भी छोटा सा कमरा दे दिया गया।

डॉ. मुखर्जी को प्रात: भ्रमण की आदत थी। इन्स्पेक्टर जनरल जेल श्री रामनाथ चोपड़ा डॉ. मुखर्जी से भेंट करने आये। उन्होंने पूछा-"क्या आपको कोई असुविधा तो नहीं है?"

डॉ. मुखर्जी ने कहा-"मुझे प्रात: भ्रमण की आदत है।"

श्री चोपड़ा ने कहा-"यह तो मामूली बात है, आप नहर की ओर भ्रमण के लिए जा सकते हैं।" श्री चोपड़ा जाते समय पुलिस सब इन्स्पेक्टर से कह गये कि डॉ. मुखर्जी को सैर की सुविधा दिला देना। अगले दिन उन्होंने उस सब इन्स्पेक्टर से कहा-"सैर के लिए ले चलो।"

उसने उत्तर दिया-"अभी लिखित स्वीकृति नहीं आयी है। अत: भ्रमण के लिए नहीं ले जाया जा सकता।"

उन्होंने उसी दिन सुपरिन्टेंडेंट से कहा तो वह चुप हो गया। वैद्य गुरुदत्त जी ने बताया कि वे समझ गये कि सैर पर जाने से ऊपर के आदेश पर रोका गया है।

तीनों बंदियों की देखभाल के लिए एक सब इंस्पेक्टर पुलिस, एक हैड कांस्टेबिल तथा आठ कांस्टेबिल नियुक्त थे। वे दिन-रात बारी-बारी से पहरा देते थे।

डॉ. मुखर्जी प्रात: पांच बजे शैया त्याग कर शौचादि से निवृत्त हो जाते थे। लान में ही १०-१५ मिनट टहलते थे। स्नान के बाद दुर्गा सप्तशती का पाठ व काली माँ की पूजा अर्चना करते थे। फिर कुछ देर तक स्वाध्याय करते थे।

लान के किनारे के दो वृक्षों के नीचे तीन कुर्सियां बिछी रहती थीं। डॉ. मुखर्जी वहीं बैठकर श्री गुरुदत्त तथा श्री टेकचंद शर्मा से देश, धर्म, संस्कृति तथा राजनीति पर चर्चा किया करते थे।

उन्हें एक रसोइया तथा एक नौकर सरकार की ओर से मिला हुआ था। रसोइया भोजन तैयार करता था, चाय नाश्ता बनाता था। सांयकाल चार बजे तीनों चायपान करते थे। जेल सुपरिन्टेंडेंट श्री नीलकंठ सप्रू चाय के समय प्राय: प्रतिदिन आ जाया करते थे। वे ही हिन्दुस्तान टाइम्स तथा उर्दू दैनिक तेज की प्रति उन्हें लाकर दिया करते थे। वैद्य जी ने

सुपरिन्टेंडेंट से समाचार सुनने के लिए रेडियो की व्यवस्था करने को कहा। वे तैयार हो गये, किन्तु शायद ऊपर से स्वीकृति न मिल पाने के कारण व्यवस्था नहीं कर पाये।

डॉक्टर साहब ने प्रसिद्ध कश्मीरी लेखक कल्हण रचित राजतरंगिणी ग्रंथ का अध्ययन किया। इसमें पुराने कश्मीरी शासकों के संस्मरण हैं। उनकी अपने पिताश्री आशुतोष मुखर्जी की जीवनी लिखने की आकांक्षा थी। उन्होंने जीवनी लिखनी शुरू की।

पांचवें दिन १७ मई को डॉक्टर साहब को हल्के ज्वर तथा दायीं टांग में पीड़ा की अनुभूति हुई। सांयकाल जेल सुपरिन्टेंडेंट को गुरुदत्त जी ने इसकी सूचना दी। जेल सुपरिन्टेंडेंट अगले दिन डॉ. अली मुहम्मद को साथ लेकर आये। सांयकाल डॉ. प्रेमनाथ आये तथा टांग में बैलाडोना का प्लास्टर लगा दिया। पीने के लिए उन्हें औषधि दी गयी। उससे ज्वर जाता रहा।

चार जून को उन्हें दोबारा दायीं टांग में पीड़ा हुई। सूचना मिलने पर दूसरे दिन डॉक्टर पहुंचा, उसने दवा दी। चार दिन बाद पीड़ा दब गयी।

ठीक ढंग से भ्रमण आदि न हो पाने के कारण डॉ. मुखर्जी को भूख लगनी बंद हो गयी। १९ जून को पं. प्रेमनाथ डोगरा को जम्मू से श्रीनगर ले जाकर डॉ. मुखर्जी से मिलवाया गया। वे डॉक्टर साहब को बहुत कमजोर देखकर हतप्रभ रह गये। बाद में डोगरा जी को भी उसी बंगले में नजरबंद कर दिया गया। उसी रात डॉ. मुखर्जी को पुन: ज्वर हो गया। पीठ में दर्द भी महसूस हुआ। जेल सुपरिन्टेंडेंट को सूचना दी गयी। वे अगले दिन २० जून को डॉ. अली मुहम्मद को साथ लेकर आये। परीक्षण के बाद बोले-"लगता है इन्हें ड्राई प्ल्यूरिसी है। सांयकाल जेल में डॉ. पं. अमरनाथ रैना आये तथा डॉ. मुखर्जी के विरोध के बावजूद स्ट्रैप्टोमाइसीन का इंजेक्शन लगाया तथा दवा की पुडिया दी। उन्हें डॉ. अली द्वारा लिखा गया पाउडर (पुडिया) खिला दिया गया। दो दिन तक दवा की पुडिया खाने से दर्द कम हो गया।

२१ जून की रात को ११ बजे पीठ की पीड़ा अचानक बढ़ गयी। एक और पुड़िया (पाउडर) ले लेने से पीड़ा कम हो गयी तथा नींद आ गयी।

हृदय में भयंकर पीड़ा

२२ जून की सवेरे चार बजे डॉक्टर साहब की जैसे ही नींद खुली कि उन्हें लगा कि जैसे हृदयस्थल के पास पीड़ा हो रही हो। उनकी सांस भी रुकने सी लगी। जी घबड़ाने लगा। आंखों के आगे अंधेरा छाने लगा। डॉक्टर साहब ने तुरन्त नौकर को जगाकर पास के कमरे में सोये हुए वैद्य गुरुदत्त जी को बुलवाया। वैद्य जी ने नाड़ी देखी। नाड़ी पकड़ में नहीं आ रही थी। शरीर पसीने से तर हो रहा था। और फिर शरीर ठंडा पड़ने लगा। वैद्य जी तुरन्त रसोईघर में पहुंचे। बड़ी इलायची, लौंग और दालचीनी लेकर आये। तीनों का चूरा बनाकर मिश्री मिलाकर डॉ. मुखर्जी को चूसने को दी। कुछ ही देर में उन्हें राहत मिल गयी। उनका हांफना, जी घबराना बंद हो गया था।

डॉ. अली मुहम्मद को सूचना भेजी गयी थी। वे साढ़े सात बजे पहुंचे। उन्होंने शरीर का परीक्षण करने के बाद कोरामीन का इंजेक्शन लगा दिया। डॉक्टर ने कहा-"इन्हें तुरन्त नर्सिंग होम में भर्ती कराना जरूरी है।" दोपहर लगभग साढ़े ग्यारह बजे जेल सुपरिन्टेंडेंट जब डॉ. मुखर्जी को नर्सिंग होम ले जाने लगे तो वैद्य गुरुदत्त जी तथा टेकचंद शर्मा ने डॉ. अली मोहम्मद से कहा-"हम दोनों को भी नर्सिंग होम में साथ ले चलो।" वे साथ ले जाने को तैयार नहीं हुए।

वैद्य गुरुदत्त जी तथा श्री टेकचंद शर्मा दोनों डॉक्टर मुखर्जी के स्वास्थ्य को लेकर चिंतित हो उठे। उन्हें सायंकाल सात बजे जेल सुपरिन्टेंडेंट ने फोन पर बताया कि डॉ. मुखर्जी अब पहले से ठीक हैं।

रहस्यमय मृत्यु

संसद सदस्य श्री उमाशंकर त्रिवेदी डॉ. मुखर्जी की नजरबंदी को गैर कानूनी सिद्ध करने वाली याचिका न्यायालय में प्रस्तुत करना चाहते थे। उन्होंने कश्मीर सरकार को प्रार्थना पत्र देकर डॉ. मुखर्जी से कानूनी परामर्श करने की अनुमति मांगी थी। अब्दुल्ला सरकार इसमें बाधा खड़ी कर रही थी। १२ जून को वे श्रीनगर पहुंचकर डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट के साथ डॉ. मुखर्जी के पास तक पहुंच गये थे, किन्तु ठीक समय पर मजिस्ट्रेट ने कहा-"मुझे ऊपर से आदेश मिला है कि आप दोनों की भेंट मेरी उपस्थिति में होगी।"

त्रिवेदी तथा डॉ. मुखर्जी दोनों ने इस शर्त पर मिलने से इंकार कर दिया। त्रिवेदी जी इसे शेख अब्दुल्ला का दुराग्रह व तानाशाही मानकर बिना भेंट किये लौट गये।

त्रिवेदी जी ने अदालत में मामला दर्ज कर दिया। जज ने जम्मू के एडवोकेट जनरल से पूछा-"एक वकील को डॉ. मुखर्जी से एकांत में कानूनी राय लेने की स्वीकृति क्यों नहीं दी गयी। यह तो न्यायोचित नहीं है।"

जज ने श्री त्रिवेदी जी को डॉ. मुखर्जी से एकांत में मिलने की स्वीकृति दे दी। तब जाकर त्रिवेदी १७ जून को डॉ. मुखर्जी से मिल पाए। कागजात तैयार कर हाईकोर्ट में मामला पेश किया गया।

२२ जून को डॉ. मुखर्जी अस्पताल में भर्ती थे, उस दिन त्रिवेदी जी पुन: उनसे भेंट करने आये। उन्होंने मुखर्जी, गुरुदत्त तथा टेकचंद की पिटीशनों पर तीनों के हस्ताक्षर कराए और लौट गये।

२३ जून की प्रात: लगभग ४ बजे श्रीनगर के होटल में रुके हुए श्री उमाशंकर त्रिवेदी को होटल से अस्पताल ले जाया गया। जेल सुपरिन्टेंडेंट बंगले पर पहुँचा। पं. प्रेमनाथ डोगरा, गुरुदत्त व टेकचंद जी को सोते से

जगाया गया। उन्होंने पूछा-"क्या बात है?"

बताया गया कि उन्हें तुरन्त अस्पताल चलना है। वे जैसे ही अस्पताल पहुँचे कि उन्हें बताया कि डॉ. मुखर्जी का रात निधन हो गया है। सभी यह सुनकर एक बार तो स्तब्ध रह कर रो पड़े। डॉ. मुखर्जी की अचानक हुई रहस्यमय मृत्यु का समाचार मिलते ही पूरा देश स्तब्ध रह गया। डॉ. मुखर्जी के शव को वायुयान से कलकत्ता ले जाया गया। डमडम हवाई अड्डे पर उनके अंतिम दर्शनों के लिए पूरा महानगर ही उमड़ पड़ा। २४ जून को उनकी शवयात्रा में लाखों लोगों ने शामिल होकर उन्हें श्रद्धासुमन अर्पित किये।

पूरे देश में शोक व्याप्त हो गया। जगह-जगह सभाएं करके उन्हें श्रद्धांजलियां अर्पित की गयीं। उनकी मृत्यु को रहस्यमयी बताकर जांच कराये जाने की मांग की गयी।

माँ का हृदय हाहाकार कर उठा

अपने पुत्र की रहस्यमय मृत्यु का सबसे बड़ा आघात उनकी माँ श्रीमती जोगमाया देवी को लगा। उन्होंने आंसू बहाते हुए कलकत्ता में कहा-"मैंने बहुत समय से अपने पुत्र को देश की सेवा के लिए अर्पित कर दिया था और मेरे पुत्र ने मातृभूमि की खातिर अपने प्राणों की आहुति दी। वह अपने सिद्धांतों पर ऐसा पक्का था कि उसने सत्ताधारी पार्टी का विरोध करने की हिम्मत की। क्या मैं यह समझूं कि स्वतंत्र भारत में विरोधी दल का नेतृत्व करना भी अपराध है? फिर भी मेरा पुत्र मरने तक नजरबंद रखा गया, एक दण्डित अपराधी की भाँति। फर्क इतना है कि अपराधी के स्वास्थ्य की भी जांच की जाती है, जबकि मेरे पुत्र की जांच करने का बहाना तक नहीं किया गया। ऐसा लगता है कि सत्तारूढ़ व्यक्तियों ने, जिन्हें जनता ने असीमित अधिकार से लैस कर रखा है, विद्वेष और ईर्ष्या के कारण निरन्तर उसका (डॉ. मुखर्जी का) पीछा किया और सुसंगठित अन्याय के कल-पुर्जे उसके विरुद्ध इस्तेमाल किये गये। परन्तु मेरे पुत्र का साहस उनके विद्वेष से कहीं बढ़कर और इतना मजबूत था कि उनकी क्रूरतापूर्ण यातनाओं से भी दबाया नहीं जा सका। और मरने पर भी वह सदा अमर रहेगा, क्योंकि जब मैं उसके बारे में सोचती हूं तो मुझे उन शहीदों का स्मरण हुए बिना नहीं रहता, जो रथ के पहियों के नीचे दबकर, तलवार से कटकर, बाणों से बिंधकर या जंगली जानवरों द्वारा फाड़े निगले जाकर वीरगति को प्राप्त हुए।"

प्रधानमंत्री नेहरूजी ने श्रीमती जोगमाया को अपने पत्र में लिखा-"मैं आपको केवल यही कह सकता हूँ कि मैं इस सच्चे और स्पष्ट निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि मृत्यु में कोई रहस्य नहीं है। डॉ. मुखर्जी का हर तरह से ख्याल रखा गया।"

माँ जोगमाया ने ९ जुलाई को इसके उत्तर में लिखा-"यह सारी स्थिति

एक दु:खद टिप्पणी है। आपका रवैया, रहस्य को साफ करने में मदद देने की बजाय, उसे और भी गहन कर देता है। मैं खुली जांच की मांग करती हूँ। आपके साफ और सच्चे निष्कर्ष से मुझे कोई मतलब नहीं है। सारे कांड पर प्रतिक्रिया तो अब विदित हो चुकी है। भारत की जनता को और मुझ माता को विश्वास दिलाना आवश्यक है। बहुतों के मन में शंका जड़ जमाए हुए है। आवश्यकता इस बात की है कि खुली और निष्पक्ष जांच तत्काल करायी जाए।

"मैंने अपने पत्र में जो विभिन्न प्रश्न किये थे, उनका उत्तर नहीं मिला है। मैंने आपको साफ बताया था कि मेरे पास कुछ ऐसे निश्चित सबूत हैं जो मामले से संबंधित और अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। आप उन्हें जानने या उन पर नजर दौड़ाने के लिए तैयार नहीं हैं। आप कहते हैं क्रि आपने कई ऐसे व्यक्तियों से पूछताछ की, जिन्हें कुछ तथ्यों को जानने का मौका मिला था। यह अचम्भे की बात है कि आप हमें, जो उनके परिवार के सदस्य हैं, इस मामले पर कुछ न कुछ प्रकाश डालने योग्य नहीं समझते। तिस पर भी आप कहते हैं कि आपका निष्कर्ष सच्चा है।"

वैद्य गुरुदत्त जी के आरोप

श्रीनगर में नजरबंदी के समय सुविख्यात साहित्यसाधक तथा आयुर्वेद के निष्णात वैद्य गुरुदत्त जी डॉ. मुखर्जी के साथ बन्द थे। वैद्य गुरुदत्त ने डॉ. मुखर्जी की मृत्यु को रहस्यमय बताते हुए कहा-"जहां डॉ. मुखर्जी को नजरबंद रखा गया था, वहां उस समय भी, जब डॉ. मुखर्जी की स्थिति शोचनीय हो गयी थी कोई डॉक्टरी सहायता प्राप्त नहीं थी।

"यह खेद की बात है कि एक बहुमूल्य जीवन ऐसी परिस्थिति में गंवाया गया, जिसको मेरी राय में अधिक दक्षता के साथ संभाला जा सकता था।

"उनकी नजरबंदी के स्थान पर नर्सिंग की कोई व्यवस्था नहीं की गयी थी।

"जब तक वह सब जेल में थे, तब तक लेबोरेटरी परीक्षा (प्रयोगशाला में मल-मूत्र आदि की रासायनिक जांच) नहीं की गयी।

"उन्हें जब अस्पताल ले जाया गया, तब उनके किसी नजरबंद साथी को उनके साथ रहने नहीं दिया गया।

"डॉ. मुखर्जी द्वारा यह इच्छा प्रकट करने के बाद भी कि उनके नजरबंद साथियों को अस्पताल लाया जाए, उनके साथियों को तब तक कोई सूचना नहीं दी गयी, जब तक कि उनकी मृत्यु नहीं हो गयी।''

श्री उमाशंकर त्रिवेदी के आरोप

संसद सदस्य तथा विधिवेत्ता श्री उमाशंकर त्रिवेदी ने डॉ. मुखर्जी की नजरबंदी को अवैध बताते हुए न्यायालय में याचिका दाखिल की थी। मृत्यु से एक दिन पूर्व २२ जून को वे अस्पताल में डॉ. मुखर्जी से मिले थे। उन्होंने वक्तव्य में आरोप लगाया-"२२ जून को प्रातःकाल ४ बजे जब डॉ. मुखर्जी को पहली हृदय पीड़ा हुई, तब उन्हें पूर्णतया विश्राम करने का परामर्श नहीं दिया गया।

"उनको तत्काल अस्पताल नहीं ले जाया गया और सात घंटे का बहुमूल्य समय नष्ट कर दिया गया।

"उनको ऐंबुलेंस गाड़ी में नहीं, बल्कि एक छोटी टैक्सी में बड़ी असुविधा के साथ अस्पताल ले जाया गया।

"अस्पताल में दाखिल होने के बाद भी उनका तात्कालिक उपचार नहीं किया गया।

"बीमारी की गंभीरता पर ध्यान नहीं दिया गया।

"जेल सुपरिंटेंडेंट से सुबह ही कहा गया कि डॉ. मुखर्जी को अस्पताल पहुंचाया जाए, पर उन्होंने समय बर्बाद किया और सचमुच सवा घंटे तक श्री रैना से बातें करते रहे।

"डॉ. मुखर्जी ने अपनी पिछली बीमारी के समय कलकत्ता के सुयोग्य डॉक्टरों द्वारा दिये गये परामर्श के आधार पर कहा था कि उन्हें स्टेपटोमाइसिन का टीका न लगाया जाए। उनके इस स्पष्ट विरोध के बावजूद, उनकी शारीरिक स्थिति की जांच किये बिना तथा उनके कलकत्ता वाले डॉक्टरों से, जिनसे फोन पर बात की जा सकती थी, परामर्श किये

बिना, उन्हें स्टेप्टोमाइसिन का टीका लगाया गया।''

श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा जांच की मांग

श्री जयप्रकाश नारायण डॉ.मुखर्जी की राजनीति से सहमत नहीं थे। फिर भी ८ जुलाई को उन्होंने एक वक्तव्य में कहा-"आज सुबह के अखबारों में श्री अतुल घोष को भारत के प्रधानमंत्री द्वारा दिया गया उत्तर छपा है। मुझे इस बात पर गहरा अफसोस है कि इसमें प्रधानमंत्री ने सुनिश्चित रूप से बताया है कि स्व. डॉ. मुखर्जी के मामले में कश्मीर सरकार द्वारा किसी प्रकार की उपेक्षा नहीं दिखलाई गयी। मैं नहीं जानता कि प्रधानमंत्री के सामने कौन से तथ्य पेश किये गये। पर, जो कुछ तथ्य मेरी जानकारी में आये हैं, उनसे तो कुछ और ही निष्कर्ष निकलता है।''

श्री जयप्रकाश नारायण आगे कहते हैं:

"मुझे ऐसा लगता है कि ऐसी राष्ट्रीय शोक की घटना के बाद भारत सरकार को चाहिए कि कम से कम इस सारे मामले की उचित एवं निष्पक्ष जांच की व्यवस्था करे। इस बीच में प्रधानमंत्री द्वारा ऐसे विवादास्पद विषय पर कोई निर्णय घोषित करना तथा ऐसे लोगों के अपराधों पर लीपापोती करना, जो कठोर दण्ड के योग्य प्रतीत होते हैं, उचित नहीं जंचता।''

डॉ. जयकर की मांग

भारत के संघीय न्यायालय के जज तथा इंग्लैंड की प्रिवी कौंसिल की न्यायाधीश समिति के सदस्य जैसे प्रतिष्ठित पदों को सुशोभित करनेवाले डॉ. जयकर जैसी विभूति का हृदय भी डॉ. मुखर्जी के साथ किये गये अमानवीय व्यवहार के कारण द्रवित हो उठा था। डॉ. जयकर ने पुणे में वक्तव्य देते हुए कहा-"कैदखाने में अपने देश की स्वदेशी सरकार द्वारा उन व्यक्तियों द्वारा जिनके साथी के रूप में अभी कुछ दिन पहले वह भी शासन सत्ता में साझीदार रह चुके थे, नजरबंद किया जाना और उसी कारावास में निधन होना घोर शर्मनाक है। हम आशा करें कि भारत सरकार को जो आत्म संतोष की तंद्रा में मग्न है, यह घटना तन्द्रामुक्त करेगी और वह इस रहस्यमय मृत्यु की जांच कराएगी।''

श्री निर्मलचन्द्र चटर्जी ने लोकसभा में जांच की मांग की

हिन्दू महासभा के वरिष्ठ नेता, सांसद तथा डॉ. मुखर्जी के अनन्य सहयोगी श्री निर्मलचन्द्र चटर्जी ने १८ सितम्बर १९५३ को संसद सत्र का प्रारंभ होते ही लोकसभा में कहा-"इस दु:खद देहान्त से हुई व्यथा को और भी तीखी बनानेवाली बात यह है कि भारत के महानतम सपूतों में से एक की आजादी, विदेशियों द्वारा संचालित फरेबी सरकार ने नहीं, बल्कि इसी धरती के लालों द्वारा चलायी जानेवाली सरकार द्वारा छीनी गयी। सबसे अधिक शोक की बात यह है कि उनको बिना जांच के जेल के सींखचों के अंदर कैद रखा गया और चिंताजनक बीमारी के बावजूद उनके साथ साधारण अपराधियों का सा बरताव किया गया। केवल इसलिए कि वह अपने देश को हार्दिक अनुराग के साथ प्यार करते थे और देश की एकता और अखंडता को सुदृढ़ बनाने का वह अपने ढ़ंग से प्रयत्न कर रहे थे।

"डॉ. मुखर्जी पं. नेहरू की सरकार के उग्र आलोचक थे। खासकर श्री नेहरू की कश्मीर संबंधी नीति तथा पाकिस्तान व शरणार्थियों संबंधी नीति की वह कड़ी आलोचना किया करते थे। पर भारत के ये सबसे कुशल संसदीय कलाविद, जेल में पड़े सड़ रहे थे और वहीं मृत्यु के जबड़ों ने उन्हें ग्रस लिया।

"यह भावना, यह आशंका, कि शासक किसी राजनीतिक प्रतिपक्षी को जेलखाने में बिना जांच के नजरबंद रख कर उसका खात्मा करा सकते हैं, जनतंत्रवाद के लिए सबसे बड़ा खतरा है। इस शंका को दूर करना जरूरी है। यह तभी दूर हो सकती है, जब निष्पक्ष जांच की जाए। मैं समझता हूँ कि सरकार का हित इसी में है कि वह तत्काल इस मांग को स्वीकार करे।"

श्री अटलबिहारी वाजपेयी का मत

श्री अटलबिहारी वाजपेयी डॉ. मुखर्जी के साथ जम्मू-कश्मीर गये थे। माधेपुर पोस्ट पर गिरफ्तार होने पर डॉ. मुखर्जी ने उन्हें यह कहकर वापस भेज दिया था कि पूरे देश को बता दो कि मैं नजरबंदी की स्थिति

में बिना परमिट के जम्मू-कश्मीर में प्रवेश करने में सफल हो गया हूँ। श्री वाजपेयी ने दु:खी हृदय से कहा-"डॉ. मुखर्जी ने देश की अखण्डता की रक्षा के लिए भारत के मुकुट कश्मीर को भारत से अलग करने के षड़यंत्र का पर्दाफाश करते हुए अपना बलिदान दिया। उनकी मृत्यु निश्चय ही संदिग्ध अवस्था में हुई है। इसकी जांच अवश्य ही करायी जानी चाहिए।"

पूरे देश में शेख अब्दुल्ला सरकार के विरुद्ध वातावरण बनता गया। अन्ततोगत्वा कुछ ही माह बाद शेख अब्दुल्ला के परम मित्र व सबसे बड़े हितैषी प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को बाध्य होकर शेख अब्दुल्ला को गिरफ्तार कर जेल में डालना पड़ा।

देश की अखण्डता के लिए डॉ. मुखर्जी ने अपना जीवन बलिदान कर दिया। क्या देश की तत्कालीन सरकारों ने इससे कोई सबक लिया? आखिर कब तक भारत के सुपुत्र इस तरह बलिदान देते रहेंगे?

□□□